हिंदी शिक्षण के अंतरराष्ट्रीय आयाम

समस्याएं, चुनौतियाँ एवं समाधान

सम्पादक

डॉ.कृष्ण कुमार

प्रकाशक

मूल्यः (भारत में)
(विदेशों में)

अनुक्रम

सम्पादकीय

1 . **श्रीश जैसवाल**
विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण:कुछ आयाम

2 . **महेन्द्र वर्मा**
ब्रिटेन में हिंदी अध्ययन-अध्यापन के कुछ पहलू

3 . **अर्चना पैन्यूली**
हिंदी शिक्षण की समस्याएं और हिंदी अध्यापकों की योजना, समस्या व समाधान

4 . **लुदमीला खोखलोवा, बारिस जाखारीन**
मास्को विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाने का अनुभव

5 . **येकातेरीना पानिमा**
हिंदी अध्ययन की विधियॉं-शब्दावली और शब्दरचना

6 . **वंदना मुकेश**
हिंदी शिक्षण एवं प्रशिक्षण में समस्याएं, चुनौतियॉं एवं समाधान

7 . **श्रीराम परिहार**
हिंदी शिक्षण एवं प्रशिक्षण में समस्याएं: चुनौतियॉं एवं समाधान

8 . **गेनादी श्लोम्पर**
ब्रू भाषा-भाषी छात्रों को हिंदी पढ़ाने की समस्याएं और उनका सामाधान

9 . **चित्रा कुमार एवं ऐश्वर्ज कुमार**
दूसरी भाषा के रूप में हिंदी

10. **फ्रेंचिस्का ओरिसिनी**
उच्च हिंदी शिक्षण में वेब का प्रयोग

11. **कृष्ण कुमार**
अंतरराष्ट्रीय स्तर हिंदी शिक्षण- प्रशिक्षण की आवश्यकताएं

परिचय

चित्र

समर्पण

यह निबंध संग्रह स्वर्गीय वामनराव पेठे, पंडित भास्कर विष्णु फड़के सहित अन्य सभी चिंतको को समर्पित है जिन्होंने आधुनिक भारत में देशत्व भावना को जाग्रत किया । साथ में यह संकलन पत्नी चित्रा कुमार, पुत्र डॉ. प्रारब्ध कुमार एवं पुत्रवधू नैथली ब्यूर्ग को भी समर्पित है जिन्होंने मेरे मन-मानस में प्राण का संचार किया ।

सम्पादकीय

हिंदी का फ़लक उत्तरोत्तर अपनी सीमाओं का विकास कर रहा है तथा यह विश्व में एक बड़े समूह की भाषा के रूप में उभर रही है । डॉ.जयन्ती प्रसाद नौटियाल के तीस वर्षो के अथक शोध से यह निष्कर्ष निकला है कि हिंदी विश्व में बोली जाने वाली भाषाओं में नम्बर एक के स्थान पर है । यह 63 राष्ट्रों में किसी न किसी रूप में प्रयुक्त है तथा विश्व में इसको समझने वालों की संख्या 1.022 बिलियन है जबकि मैंडरिन की संख्या 0.93 बिलियन ही है । जनसंख्या के आधार पर यह सांचा जाता रहा है कि चीन की मैंडरिन नम्बर एक के स्थान पर है । अंग्रेजी जो कि विश्व की लिंग्वाफ्रैंका बन नम्बर तीन के स्थान पर है ।

संतोषजनक बात तो यह है कि आठवें विश्व हिंदी सम्मेलन के उद्‌घाटन सत्र में संयुक्त राष्ट्रसंघ के महासचिव विंगका मून ने संध के मुख्य सदन में हिंदी में सबका स्वागत किया था । हिंदी की सम्भावनाएं निरंतर बढ़ती जा रही हैं । और यह अब शीघ्र ही संयुक्त राष्ट्रसंघ की मनोनीत भाषाओं में भी स्थान पाएगी, ऐसी आशा हम कर रहे हैं । भारत की सुधरती आर्थिक स्थिति के कारण भी विश्व व्यापारियों की नजर भारत पर है और इस कारण भी हिंदी का फ़लक बढ़ रहा हे । व्यवसायिक हिंदी की सम्भावनाएं बढ़ रही हैं ।

हिंदी के बदलते भविश्य एवं सामयिक आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार की सहायता से 24-26 जून 2011 में बर्मिंघम में, गीतांजलि बहुभाषीय साहित्यि समुदाय द्वारा यू.के. एवं यूरोप की अन्य संस्थाओं के सहयोग से एक त्रिदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया था । इस सम्मेलन में भारत एवं यू.के., स्पेन, डेनमार्क, मास्को, इजराइल और हालैंड के विद्वानों के अतिरिक्त प्रकाशकों, पत्रकारों, सम्पादकों एवं मीडिया कर्मियों ने भी भाग लिया था । कार्यक्रम की सफलता के लिए इस महायज्ञ में भारतीय दूतावास में हिंदी-संस्कृति अधिकारी श्री आनन्द कुमार के अथक प्रयास की भावभीनी आहुति भी पड़ी । इस महायज्ञ में कई महापुरुषों के योगदान सराहनीय रहे हैं जिनमें उल्लेखनीय हैं श्री महेन्द्र वर्मा, श्री ऐश्वर्ज कुमार, श्री हर मोहिन्दर सिंह ''उपाशक'' एवं श्री कृष्ण बिहारी लाल सक्सेना । इन सबने मिल कर हिंदी को आगे बढ़ाने में सहयोग दिया ।

इन सबके मध्य भ्रष्टाचार जैसे कैंसर के महासागर में देश आकंठ डूबा हुआ है । किंतु भारतीयों को निराश होने की कोई आवश्कता नहीं है । हमको अपने मनोबल और आत्मविश्वास को संजोकर रखना है क्योंकि यही वह अस्त्र है जिससे सभी समस्याओं-आपदाओं का समाधान हुआ है । जरा सोचिए कि यदि अठारहवीं शताब्दी से अरबों की धनराशि देश से काले धन के रूप में बाहर न गई होती, राबर्ट क्लाइव अपने व्यक्तिगत हित के लिए भारत से US$1,170,000 की धनराशि उठा कर न ले गया होता और US$140,000 प्रतिवर्ष अफीम की तस्करी के रूप में ले गया होता तो भारत की क्या स्थिति होती (विल डुरैंट,द केस फॉर इंडिया, पृष्ठ 7) । इन सबके बावजूद भारत की प्रगति , आज के समय में, 8-10 प्रतिशत प्रतिवर्ष हो रही है । यह सब भारतीयों एवं भारत की शक्ति का परिचायक है ।

किंतु इक्कीसवीं सदी में, स्वतंत्र भारत के लिए राष्ट्रभाषा का न होना, निश्चय ही चिंता का कारण बन गया है । और इसके कारण भारत की अखंडता-एकता को खतरा है । यह है सम्पूर्ण भारत के लिए एक सम्पर्क भाषा का न होना जिसके माध्यम से देश अपने विचारों को व्यक्त कर सके । राष्ट्र को एक जुट हो कर इस पर विचार करना चाहिए । यह विषय भ्रष्टाचार से भी अधिक चिंताजनक है क्योंकि इसके कारण भारत की अस्मिता को खतरा है और सबकुछ मिट जाने का भय भी है । यही विचार श्री आरविंदो जी ने 14 अगस्त 1947 को राष्ट्र के सामने रखे थे ।

भाषा के स्थाई विकास एवं चिरकालीन प्रभाव के लिए आवश्यक है कि इसके शिक्षण, पठन-पाठन एवं प्रशिक्षण पर बल देते हुए इसे समय एवं परिवेश के अनुकूल बनाए रखा जाय । अधिकतर हिंदी शिक्षण प्रथम या द्वितीय भाषा के रूप में ही होता आया है और पाठ्‌यक्रमों के निर्माण इसी के अनुकूल होते रहे हैं । किंतु अनेक परिस्थितियॉं ऐसी भी आई हैं जहॉं सीखने वालों के लिए हिंदी तृतीय या चतुर्थ भाषा के रूप में आई है । जैसे यू.के. में बसे पंजाबी या गुजराती बच्चे । अत: समय की आवश्यकता कहती है कि हिंदी पाठ्‌यक्रमों का निर्माण ऐसा हो जिसमें हिंदी को तृतीय या चतुर्थ भाषा के रूप मे देखा गया हो ।

यू.के. क्षेत्रीय हिंदी सम्मेलन में हिंदी के विभिन्न पक्षों पर विचार-विमर्श हुआ । 10 आलेख तो हिंदी शिक्षण पर ही केन्द्रित थे । सामयिक प्रकाशन के निदेशक श्री महेश भारद्वाज जी ने प्रस्ताव रखा कि हिंदी शिक्षण से सम्बंधित आलेखों को एक पुस्तक

का रूप दिया जाय तो अच्छा रहेगा । यह कार्य महेश जी ने मुझको सौंपा । यह पुस्तक उसी प्रस्ताव का प्रतिफल है । पुस्तक निर्माण की प्रक्रिया में सर्वप्रथम श्री महेन्द्र वर्मा जी के माध्यम से लेखकों से उनकी स्वीकृति और अनुमति ली गई ।

हिंदी शिक्षण के अन्तरराष्ट्रीय आयाम में कुल मिलाकर 11 आलेख हैं । पहला आलेख प्रो. श्रीश जैसवाल का है जो आजकल स्पेन में भारतीय सांस्कृतिक सम्बंध परिषद की ओर से विज़िटिंग प्रोफेसर के रूप हिंदी शिक्षण से जुड़े हैं । उनका आलेख 'विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण: कुछ आयाम' यह स्थापित करता है कि ''विदेशी भाषा के अध्ययन में लक्ष्य-भाषा के रूप में अध्येता को सामाजिक तथा सांस्कृतिक ज्ञान का होना बहुत महत्त्वपूर्ण है ।'' तथा इस दिशा में उचित सामग्री उपलब्ध कराने की आवश्यकता है । श्री महेन्द्र वर्मा ने यू.के. में, द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण की नींव रखते हुए, उपयुक्त पाठ्यक्रमों का निर्माण किया, करवाया और अब भी सेवा निवृत होने के बाद भी हिंदी शिक्षण सेवा में संलग्न होते हुए कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय को अपनी सेवाएं अर्पित कर रहे हैं । ''ब्रिटेन में हिंदी अध्ययन-अध्यापन के कुछ पहलू'' में उन्होंने अपने 40-45 वर्षो के शिक्षण-प्रशिक्षण के विभिन्न अनुभवों के आधार कुछ मौलिक विचार प्रस्तुत किए हैं । डेनमार्क में भारतीय प्रवासी अर्चना पैन्यूली ने, जो एक जानी-मानी कथाकार हैं, अपने आलेख ''हिंदी शिक्षण की समस्याएं और हिंदी अध्यापकों की योजना, समस्या व समाधान'' में डेनमार्क में हिंदी शिक्षण- प्रशिक्षण की समस्याओं और उनके कारणों पर एक सूक्ष्म दृष्टि डालती हुई विश्व हिंदी समाज से बड़ी ही सारगर्भित अपील करती हैं । लुदमीला खोखलोवा, बोरिस जाखारिन तथा येकातेरीना पानिमा के आलेख, ''मास्को विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाने का अनुभव'' और ''हिंदी के अध्ययन की विधियॉं-शब्दावली और शब्दरचना'', मास्को में हिंदी शिक्षण के दृश्य चित्रित करते हुए सामयिक आवश्यकताओं की ओर सबका ध्यान खींचती हैं । ब्रिटेन निवासी हिंदी शिक्षक डॉ. वंदना मुकेश ''हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण में समस्याएं, चुनौतियॉं एवं समाधान'' के माध्यम से पूरा चित्र खींचते हुए समस्याओं और उनके समाधान की ओर संकेत करती हैं ।

भारत के अनुभवी शिक्षक डॉ. श्रीराम परिहार का आलेख '' हिंदी शिक्षण एवं प्रशिक्षण में समस्याएं, चुनौतियॉं एवं समाधान'' भी वह सब प्रस्तुत करता है जिसकी जानकारी सबको होनी चाहिए । इजराइल से पधारे डॉ. गेनादी श्लोम्पर का आलेख ''ब्रू भाषा-भाषी छात्रों को हिंदी पढ़ाने की समस्याएं और उनका समाधान'' व्यौहारिक दिक्कतों का उल्लेख करते हुए यह बताया है कि उच्चारण सम्बंधी समस्याओं के समाधान इजराइल में हिंदी भाषी लोगों की कमी के कारण प्रबल हा रहा है । हिंदी फिल्मों के माध्यम से कुछ सफल-सार्थक प्रयोग अमेरिका एवं मास्को में किए गए हैं, हो सकता है इजराइल में भी इसकी कुछ उपयोगिता हो । चित्रा कुमार एवं ऐश्वर्ज कुमार का आलेख ''दूसरी भाषा के रूप में हिंदी'' में दिखाया है कि किस प्रकार कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का हिंदी पाठ्यक्रम विश्व के विभिन्न देशों में सफल हो रहा है । स्कूल ऑफ ओरियंटल ऐंड अफ्रीकन स्टडीज़ की फ्रेंचिस्का ओरिसिनी का आलेख ''उच्च हिंदी शिक्षा में वेब का प्रयोग'' अधुनातम प्रौद्योगिकी सूचना तंत्र का प्रयोग कर हिंदी शिक्षण में विस्तार लाने का प्रस्ताव रखते हुए अपने प्रयोग का वर्णन करता है । संकलन का अंतिम आलेख, यद्यपि संगोष्ठी में प्रस्तुत नहीं किया गया था फिर भी उपयोगिता के कारण इसमें सम्मिलित किया जा रहा है और यह है डॉ.कृष्ण कुमार का ''अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण की आवश्यकताएं '' ।

संकलन में समाहित आलेखों की विविधता-व्यापकता को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि विश्व हिंदी जगत के लिए हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण को ध्यान में रख कर लिखे गए इन आलेखों का यह निबंध संग्रह उपयोगी सिद्ध होना चाहिए । इसमें पाठकों को कुछ आलेखों में वर्तनीदोष मिल सकता है । इनको ज्यों का त्यों रख दिया गया है, जो सुधारा जा सकता था, ताकि पाठकों को विश्वहिंदी की विविधता का अंदाजा भी लग जाय ।

मैं पुन: यौर्क के श्री महेन्द्र वर्मा एवं कैम्ब्रिज के श्री ऐश्वर्ज कुमार के योगदानों को रेखांकित करते हुए उनके प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ । साथ में उन सभी साथियों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करना चाहता हूँ जिनके आलेखों को इस संग्रह में रखा गया है । भारत सरकार का भी मैं आभारी हूँ जिसने इस सम्मेलन हेतु आर्थिक सहायता प्रदान कर इसको सम्भव बनाया था । अंतिम निर्णय तो विश्व हिंदी जगत ही देगा कि हमारा यह प्रयास कहॉं तक सफल रहा । अस्तु ।

डॉ. कृष्ण कुमार
अध्यक्ष एवं संस्थापक
गीतांजलि बहुभाषीय साहित्यिक समुदाय, बर्मिंघम
बी 29 6क्यू जी
यू.के.

विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण : कुछ आयाम

श्रीश चंद्र जैसवाल

भाषा संस्कृति का सर्वाधिक शक्तिशाली और समृद्ध उपकरण है क्योंकि वह संगति और सम्बन्ध के बोध का वाहक है। वह एक ओर सामाजिक संस्था के निर्वाह का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपकरण है तो दूसरी ओर व्यक्तित्व निर्माण का सार्थक साधन। एक स्तर पर वह सम्प्रेषण संभावना की प्रतीकबद्ध व्यवस्था है तो दूसरे स्तर पर अभिव्यक्ति की सर्जनात्मक संभावना।

भाषा एक बहुत बड़ी विभाजक शक्ति भी हो सकती है, यह नकारात्मक शक्ति एक संकटग्रस्त अस्मिता के बोध से ही उत्पन्न होती है। अस्मिता का यह बोध मूल रूप से भाषा के साथ ही जुड़ा हुआ है और जीवित भाषा की उपज है। 'कोई किसी भाषा का है' इसके निर्णय से पहले यह आवश्यक है कि वह भाषा 'उसकी' हो। यह ममत्व जन्म से या व्याकरण के अध्ययन मात्र से नहीं आता वरन भाषा के उपयोग से – जीवंत भाषा से आता है । भाषा का उपयोग जितना ही व्यापक और गहरा होता है उतनी ही भाषा समृद्धतर होती है और अपने व्यवहर्ता को समृद्धतर बनाती है। भाषा व्यवहार समृद्धि देने वाला तभी होता है जब उसके साथ लगाव / प्रतिबद्धता हो। ऐसे ही भाषा संस्कृति का और अस्मिता का उपकरण बनती है और यहीं मातृभाषा का भी सन्दर्भ उभरता है ।

पिछली शताब्दी तक बहुभाषी होना व्यक्ति की सांस्कृतिक सम्पन्नता का द्योतक था। द्वितीय भाषा के रूप में भाषा का अध्ययन – अध्यापन एक सीमित वर्ग के कुछेक व्यक्तियों तक ही संकुचित था, पर आज की स्थिति सर्वथा भिन्न है। द्वितीय भाषा के रूप में भाषा की जानकारी आज सांस्कृतिक सम्पन्नता की द्योतक मात्र नहीं रह गई है, वरन वह एक व्यावहारिक आवश्यकता बन गई है ।

भाषा शिक्षण का क्षेत्र अनुप्रयोगात्मक होता है – वह अनिवार्यतः उद्देश्यपरक होता है। भाषा किसी न किसी उद्देश्य या प्रयोजन के सन्दर्भ में सीखी या सिखाई जाती है। भाषा शिक्षण की अपनी सिद्धि निर्धारित प्रयोजन की सिद्धि है, जो प्रयोक्ता सापेक्ष होती है। भाषा प्रयोक्ता की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन के रूप में भाषा शिक्षण की सिद्धि को ऐसी रेखा के रूप में देखा जा सकता है, जिसके एक छोर पर विदेशी प्रयोक्ता वर्ग है और दूसरे छोर पर मातृभाषी प्रयोक्तावर्ग ।

हिंदी भाषा शिक्षण के सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि उसके एक छोर पर ऐसे व्यक्तियों का समुदाय है, जो न हिंदी भाषा जानता है और न जिसे सामाजिक या वैयक्तिक आवश्यकताओं के लिए हिंदी भाषा जानना ही ज़रूरी है (विदेशी परिवेश) और उसके दूसरे छोर पर ऐसा समुदाय है, जो न केवल हिंदी भाषा का कामचलाऊ ज्ञान रखता है वरन उसके मानक रूप के प्रयोग की भी दक्षता रखता है। मातृभाषा एक संस्थागत यथार्थता है। वह व्यक्ति के

आत्मीय व्यवहार क्षेत्रों को भाषाई समाज के वृहत्तर सामजिक सन्दर्भों से जोड़ने वाली संकल्पना है, जो व्यक्ति की सामाजिक अस्मिता को निर्धारित करती है।

द्वितीय भाषा मातृभाषा के साथ ही वह सहयोजित भाषा होती है , जिसे भाषायी समुदाय का एक सदस्य होने के नाते प्रयोक्ता सीखता है। वह भाषाई समुदाय के भाषाई कोष (वर्बल रिपत्वाँ)की एक भाषा होती है ।

इसके विपरीत प्रयोक्ता विदेशी भाषा न तो अनिवार्यतः सीखता है और न ही वह उसके भाषाई समुदाय के भाषाई कोष की ही भाषा होती है। इस प्रकार अंग्रेज़ी और हिंदी दोनों ही हिंदीतर भाषाई क्षेत्र में द्वितीय भाषा के रूप में देखे जा सकते हैं, पर इनमे एक प्रमुख अंतर है – एक विजातीय भाषा है, जिसमें विदेशी भाषा के सामाजिक सन्दर्भ और सांस्कृतिक मूल्य भी समाविष्ट मिलते हैं, जिनके व्यावहारिक प्रयोग के नियम दूसरे समाज की व्यवस्था को प्रतिबिंबित करते हैं। इसकी तुलना में ‘हिंदी’ अन्यभाषी भारतीयों के लिए एक स्वजातीय भाषा है , जिसका भाषाई समाज ऐतिहासिक दृष्टि से व्यापक स्तर पर घटनाओं के एक ही दौर से गुज़रा है, जो सामजिक संस्थाओं की बनावट और मूल्यों के सन्दर्भ में बहुत कुछ समान है।

विदेशों में हिंदी और विदेशी भाषा के रूप में हिंदी ये दो भिन्न भिन्न संकल्पनाएँ हैं। एक का सम्बन्ध हिंदी के समाजशास्त्रीय पक्ष से है और दूसरे का सम्बन्ध हिंदी के शैक्षिक पक्ष से है। हिंदी का समाजशास्त्रीय पक्ष यह संकेत देता है कि राष्ट्रीय सन्दर्भ से इतर उसका एक अंतर्राष्ट्रीय सन्दर्भ भी है। हिंदी बड़े पैमाने पर फ़ीजी, ट्रिनिदाद, गुयाना,मारीशस, सूरीनाम,नेपाल, ,भूटान, आदि देशों में प्रयोजनमूलक भाषा के रूप में प्रयुक्त हो रही है। बर्मा, श्रीलंका, कम्पूचिया में हिंदी सामाजिक और सांस्कृतिक अन्तःशक्ति के रूप में विद्यमान है तथा पूर्व सोवियत संघ, अमेरिका यूरोप तथा एशिया के अनेक देशों में हिंदी के प्रति गहरी शैक्षिक अभिरुचि है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी लगभग 160 विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जा रही है । हिंदी में अंतर्राष्ट्रीय भाषा के लिए आवश्यक सामर्थ्य है। इस क्षमता की पहचान आज के परिप्रेक्ष्य में बहुत आवश्यक है।

भाषा शिक्षण के प्रणाली तंत्र का सम्बन्ध उस तंत्र या ढाँचे के साथ होता है, जो भाषावैज्ञानिक सिद्धांत को शैक्षिक सिद्धांत या तंत्र से जोड़ता है। यह वस्तुतः भाषाशिक्षण को व्यवस्थित करने का संक्रियात्मक (Operational) साधन है। इसका सम्बन्ध एक तरफ लक्ष्यभाषा (Target Language) के स्वरूप से जुड़ा होता है तो दूसरी तरफ शिक्षार्थी की मातृभाषा के साथ तुलना के प्रश्न से संबद्ध होता है।

जहां अध्येताओं का वर्ग समभाषी (Homogeneous) होता है ,वहाँ व्यतिरेकी भाषाविज्ञान या तुलनात्मक दृष्टि का विनियोग सफलतापूर्वक किया जाता है। इसके विपरीत अध्येताओं का वर्ग यदि विषम (Heterogeneous) होता है तो शिक्षण का उद्देश्य लक्ष्यभाषा ही रहता है। इस प्रकार विदेशी भाषा के में रूप में हिंदी की शिक्षण प्रक्रिया एक ओर लक्ष्य भाषा के विशेष प्रयोजनों की भाषा (Language for special purposes)की संकल्पना को जन्म देती है, तो दूसरी ओर उसके प्रभावी शिक्षण के लिए उपयुक्त शिक्षण विधि और प्रणाली पर ध्यान देती है । विदेशी भाषा के

रूप में हिंदी शिक्षण की जब भी बात होती है, तब यह प्रश्न उठता है कि लक्ष्यभाषा के रूप में हिंदी के किस मानक रूप को पढ़ाया जाए। इसके लिए हमें जीवंत मानक हिंदी के स्वरूप, हिंदी भाषा की आधारभूत संरचना, हिन्दी की सामाजिक शैलियाँ, विशेष प्रयुक्ति क्षेत्र (मौखिक, लिखित, औपचारिक, अनौपचारिक, बोलचाल, साहित्य, पत्रकारिता और विज्ञान) में हिंदी की प्रवृत्तियों पर ध्यान केंद्रित करना होगा।

विदेशों में हिंदी की पढ़ाई एक विदेशी भाषा के रूप में विश्वविद्यालय स्तर पर आरम्भ होती है। सीधे साहित्य पढ़ाकर या व्याकरण के नियम रटाकर भाषा नहीं सिखाई जा सकती है। शिशु पहले बोलना सीखता है फिर पढ़ना लिखना, उसी प्रकार हिंदी के वाचिक रूप को महत्व देते हुए सम्प्रेषणपरक दृष्टि से कौशल शिक्षण पर ध्यान देना चाहिए। यह आवश्यक है कि लिखने, बोलने, पढ़ने के सन्दर्भ में जीवन के वास्तविक प्रसंगों में अध्येता भाषा के माध्यम से अपने विचार व्यक्त कर सके। ये कौशल, जो कि वास्तव में सम्प्रेषण के सन्दर्भ हैं, भाषिक इकाइयों के अर्जन से ही प्राप्त होते हैं। कौशलों का विकासक्रम कुछ इस प्रकार होता है – प्रमुख कारक – सार्थक श्रवण, उसके उपरान्त ध्वनि, शब्दोच्चारण, वाक्योच्चारण- नियंत्रित अभ्यास द्वारा छोटे वाक्यों की संरचना और फिर स्वतन्त्र अभिव्यक्ति का विकास – फिर संवाद – वर्णन – विवरण – कथन और व्याख्यान।

ध्वनिकी वर्ण प्रतीकों से स्थानापत्ति फिर विभिन्न लेखों का वाचन। वर्ण –वर्तनी नियंत्रण के उपरान्त नियंत्रित अभ्यास द्वारा छोटे वाक्यों का लेखन तदनंतर स्वतन्त्र लेखन से तार्किक अभिव्यक्ति का विकास – पत्र –दैनिकी ,संवाद, वर्णन ,कहानी ,निबंध आदि की रचना । कौशल शिक्षण में पूरी भाषा को उसके भाषाई तत्वों, वस्तु, सन्दर्भ आदि की सम्पूर्ण व्यवस्था मानकर आयोजित करना चाहिए, न कि अलग –अलग स्वायत्त इकाइयां मानकर।

विदेशी भाषा शिक्षण में विषम वर्ग समूह में प्रत्यक्ष विधि अधिक उपयोगी है। इस शिक्षण विधि में शिक्षार्थी की मातृभाषा अथवा आरोपित संपर्क भाषा को बिना मध्यस्थ बनाए सीधे हिंदी भाषा सिखाई जा सकती है। प्रत्यक्ष विधि के अंतर्गत प्रदर्शन द्वारा कुछ शब्द बताए जाएँ – ' यह ' और ' वह ' आदि के भेद स्पष्ट किए जाएँ । अध्यापक छात्रों के स्तर को ध्यान में रखकर प्रथमतः हिंदी की अस्तित्वबोधक क्रिया का प्रयोग सिखाएं , छोटे छोटे वाक्यों के द्वारा हिंदी के वाक्यविन्यास क्रम का शिक्षण करें। इस विधि से भाषा के सीधे संपर्क में आकर शिक्षार्थी मौखिक अभ्यास के सहारे भाषा सीखता है। देर तक वाक्यों को सुनना फिर उनका इस तरह अभ्यास करना कि वे वाक्य आदत के रूप में ढल जाएँ , इस विधि की मुख्य शिक्षण प्रक्रिया है। इस विधि में न तो व्याकरण के नियमों को कंठस्थ करने पर बल दिया जाता है और न अनुवाद प्रक्रिया को ही उसके लिए आधार बनाया जाता है । प्रत्यक्ष विधि के अतिरिक्त स्वाभाविक विधि, मनोवैज्ञानिक विधि, ध्वनिवैज्ञानिक विधि, भाषा नियंत्रण विधि, अनुकरणात्मक विधि, अभ्यास सिद्धांत विधि आदि का उपयोग भी परिलक्षित होता है।

हिंदी अध्यापन के लिए विविध परिस्थितियों के आधार पर पाठ सामग्री का निर्माण किया जाना चाहिए। इसके लिए भी प्रत्यक्ष विधि एवं भाषावैज्ञानिक पद्धति को आधार बनाना चाहिए। पहले छोटे छोटे वाक्यों का अभ्यास

कराया जाए, जिससे उनमें सम्प्रेषण शक्ति का विकास हो सके। फिर वाक्यों की पूरी संरचनाओं के अभ्यास के बाद छोटे छोटे वर्णनात्मक पाठ दिए जा सकते हैं । इसके बाद छात्रों में रचनात्मक कौशल के विकास के लिए अनुस्तरित रूप में छोटी छोटी कहानियां, कवितायें प्रस्तुत की जा सकती हैं।

व्यतिरेकी विश्लेषण भाषा शिक्षण के क्षेत्र में अध्येता की कठिनाइयों का पूर्वानुमान लगाने में सहायता करता है। मातृभाषा के प्रभाव से होने वाली कठिनाइयों के बारे में अनुमान लगाकर पाठ्य बिंदुओं का इस प्रकार अनुस्तरण किया जाना चाहिए, जिसमें अध्येता की मातृभाषा एवं लक्ष्यभाषा में समान पाठ्यबिंदु पहले पढ़ाए जाएँ और असमान बिंदुओं का अभ्यास बाद में करवाया जाए।

ध्वनिसंरचना, रूपरचना, शब्दक्रम, परसर्गों का प्रयोग, विशेषणों के प्रयोग, अर्थसंरचना, वाक्यविन्यास से सम्बंधित समस्याओं का समवर्ग और विषमवर्ग के आधार पर व्यतिरेकी विश्लेषण, तुलनात्मक विधि या प्रत्यक्ष विधि के द्वारा यथा सन्दर्भ समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

इसी क्रम में विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण की कुछ समस्याओं पर ध्यान अपेक्षित है –हिंदी की ध्वनि व्यवस्था को लिया जाए तो स्वर ध्वनियों में ह्रस्व – दीर्घ के उच्चारण की समस्या विदेशियों के समक्ष आती है। एक ही शब्द में दो – तीन दीर्घ स्वरों का उच्चारण उनके लिए कठिन है। सभी स्वरों में संभव अनुनासिकता अधिकांश विदेशी विद्यार्थियों के लिए कष्टप्रद हो जाती है। हिंदी के स्वरक्रम तथा 'अ' लोप भी उच्चारण की दृष्टि से कठिन हैं। रोमांसभाषी महाप्राण व्यंजन, उत्क्षिप्त व्यंजन तथा व्यंजनगुच्छ के उच्चारण सहज रूप से नहीं कर पाते हैं। उनके लिए मूर्धन्य ध्वनियों को उच्चरित करना भी मुश्किल होता है। व्याकरणिक व्यवस्था के अंतर्गत लिंग निर्धारण, अन्विति, अन्विति हीनता, 'ने' का प्रयोग आदि अन्य कई क्षेत्र ऐसे हैं, जहां विदेशी विद्यार्थियों को अधिक सजग रहना पड़ता है।

आज सभी भाषावैज्ञानिक तथा शिक्षाशास्त्री स्वीकार करते हैं कि विदेशी भाषा अध्ययन में लक्ष्यभाषा के सामाजिक तथा सांस्कृतिक सन्दर्भ का ज्ञान अध्येता के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसके लिए छात्र की मातृभाषा तथा लक्ष्यभाषा दोनों के सांस्कृतिक तत्वों की तुलना या उनकी सापेक्षिक विशिष्टताओं का अध्ययन उपयोगी होता है। दो भाषाई समाजों के सभी सांस्कृतिक तत्वों का विश्लेषण शिक्षार्थी के लिए उपयोगी नहीं होता। यह मूलतः समाजशास्त्र का विषय है। शिक्षक, शिक्षार्थी तथा शिक्षण सामग्री निर्माताओं के लिए वे ही सांस्कृतिक तत्व मूलभूत महत्व के हैं, जो भाषा में प्रतिबिंबित होते हैं। इनमें वे ही तत्व शैक्षणिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, जो अध्येता के अपने सांस्कृतिक - सामाजिक परिवेश तथा मूल्यों से भिन्न हों। यह भिन्नता मानव व्यवहार के कई सामाजिक – सांस्कृतिक सन्दर्भों में लक्षित होती है, जैसे अभिवादन तथा संबोधन के रूप, शिष्टाचार की शब्दावली, आदरसूचक सर्वनाम, नाते –रिश्ते के शब्द, सामाजिक तथा पारिवारिक ढाँचा (Pattern), खान-पान, धर्म, रीतिरिवाज, त्यौहार, सामाजिक आकांक्षाएं तथा सामाजिक अभिव्यक्ति आदि।

प्रस्तुत आलेख में विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा शिक्षण तथा व्यतिरेकी / तुलनात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण पक्षों पर चर्चा की गई है। यह विश्लेषण पूर्ण नहीं कहा जा सकता। विदेशी भाषा के रूप में हिंदी अध्यापन तथा शिक्षण सामग्री निर्माण में अभी तक अधिकांशतः अंग्रेज़ी भाषा – भाषियों की कठिनाइयों को ही प्रायः ध्यान में रखा गया है। पिछले बीस –पच्चीस वर्षों में जो भी शिक्षण सामग्री प्रकाश में आई है, उसका अन्य विदेशी भाषा - भाषियों के लिए सुचारू रूप से उपयोग नहीं किया जा सका है, अतः आवश्यकता है कि विश्व की अन्य विदेशी भाषाओं के सन्दर्भ में हिंदी के अनुप्रयुक्त एवं व्यतिरेकी अध्ययन किए जाएँ तथा उनके परिणामों का उपयोग करते हुए सम्बंधित विदेशी भाषा-भाषियों के सन्दर्भ में हिंदी शिक्षण पाठ्यक्रमों एवं शिक्षण सामग्री का निर्माण किया जाए, तभी विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण को एक व्यवस्थित वैज्ञानिक आधार प्राप्त हो सकेगा।

स्पेनिश, रूसी, चीनी, जर्मन, फ्रांसीसी भाषाओं के अतिरिक्त रोमानियन, बल्गारियन, चैक आदि विश्व की अग्रणी भाषाओं में हिंदी अध्ययन और अध्यापन के लिए शिक्षण सामग्री उपलब्ध है किन्तु पर्याप्त मात्रा में नहीं है। इन देशों में हिंदी के प्रति अभिरुचि निरंतर बढ़ रही है, अतः इस क्षेत्र में अधिक प्रयास अपेक्षित हैं।

विश्व में हिंदी भाषा और साहित्य शिक्षण के लिए विश्वविद्यालय स्तर के समान हिंदी पाठ्यक्रमों के निर्माण की अत्यंत आवश्यकता है। इसे इतना व्यापक और लचीला बनाना होगा जिससे कि इसकी व्यापक रूपरेखा के अंतर्गत हर विश्वविद्यालय अपना विशिष्ट पाठ्यक्रम बना सके। केन्द्रीय हिंदी संस्थान अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण के मानकीकरण की प्रक्रिया में संलग्न है।

भाषा प्रौद्योगिकी आज एक विकसित विज्ञान के रूप में सर्वसामान्य को उपलब्ध है। इसका पर्याप्त उपयोग अपेक्षित सामग्री निर्माण में आशातीत सफलता प्रदान कर सकता है। दृश्य – श्रव्य सामग्री, फ़िल्में, टेलीवीज़न के विभिन्न कार्यक्रम अतिरिक्त शिक्षण सामग्री के रूप में उपयोग में लाए जा सकते हैं। हिंदी शिक्षण में संलग्न सभी संस्थाओं के सम्मिलित प्रयासों से इस क्षेत्र में आनेवाली समस्याओं का समाधान अवश्य हो सकेगा ।

ब्रिटेन में हिन्दी अध्ययन-अध्यापन के कुछ पहलू

महेन्द्र वर्मा

भाषा शिक्षण में कई महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना पड़ता है। भाषा नियोजन में जिनका योगदान है वे हैं- शिक्षार्थी, उनकी मातृभाषा / विरासतीय भाषा, विदेशी भाषा के प्रति अभिवृत्ति एवं अभिप्रेरणा, उनका भाषा परिदृश्य एवं उनकी भाषा प्रवीणता, शिक्षक एवं उनका प्रशिक्षण, भाषा-संदर्भ, पाठ्य पुस्तकें, भाषा परीक्षण, शिक्षा नीति एवं प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा में स्थान, घर का भाषिक माहौल, अभिभावकों का भाषा नियोजन, उनकी भाषा नीति एवं उसका वचनवद्धता के साथ कार्यान्वयन। इन शैक्षिक सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए ब्रिटेन के संदर्भ में हिन्दी अध्ययन-अध्यापन के कुछ पहलुओं पर विचार करूंगा।

ब्रिटेन में हिन्दी शिक्षण की पृष्ठ-भूमिः

ब्रिटेन में हिन्दी शिक्षण का इतिहास काफ़ी पुराना है। सरकारी अफ़सरों एवं सैनिकों की औपनिवेषिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम बनाया गया था। ये लोग ब्रिटेन और भारत में हिऩ्दी-उर्दू का अध्ययन करते थे। स्वाभाविक है कि यह पाठ्यक्रम व्यस्कों के लिए ही था। ब्रिटिश साम्राज्य के अन्त होने के बाद काफ़ी संख्या में भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश के नागरिक परिवार के साथ ब्रिटेन आने लगे। पिछले पाँच-छह दशकों में आप्रावासियों की संख्या बढ़ती चली गयी। वे अभी अच्छी तरह बसे भी नहीं थे कि बड़े-बूढे महसूस करने लगे कि उनके और पोते-पोतियों के बीच वार्तालाप की भाषा लुप्त होने लगी है। सरकारी विद्यालयों में अल्पसंख्यक दक्षिण भारतीय भाषाओं के अध्यापन की कोई सुविधा नहीं थी। मातृभाषा/विरासत की भाषा के संभावित विस्थापन से माता-पिता, दादा-दादी की चिऩ्ता जब बढ़ने लगी तब उन्होंने मंदिरों, सामुदायिक केन्द्रों, विद्यालयों, घरों में स्वैच्छिक विद्यालयों की स्थापना शुरू कर दी। वर्षों बाद जब राष्ट्रीय पाठ्यक्रम बना तब कुछ स्कूलों में हिन्दी की भी पढ़ाई आधुनिक विदेशी भाषा के रूप में शुरू हो गई। 1988 से 1994 तक 'जी.सी.एस,ई.' की हिन्दी में परीक्षा चलती रही। दुर्भाग्यवश परीक्षा बोर्ड ने परीक्षार्थियों की कम संख्या होने का कारण बता कर 'जी.सी.एस,ई.' और 'ए स्तर' की परीक्षाओं को बन्द कर दिया। स्कूलों में हिन्दी की पढ़ाई बन्द तो हो गई, पर इन सब के बावजूद भी निष्ठावान शिक्षकों और कुछ माता-पिता की प्रतिबद्धता के बल पर स्वैच्छिक कक्षाओं में हिन्दी की पढ़ाई अनेक शहरों में चल रही है। ये कक्षाएं प्रायः शनिवार / रविवार को लगती रही हैं। हिन्दी शिक्षण का इतिहास भी है तो यही है, पर और भाषाओं के बनिस्बत हिन्दी के शिक्षार्थी विभिन्न मातृभाषा परिवार के होते हैं। शिक्षण, प्रशिक्षण, पाठ्यपुस्तक - इन सब के लिए इस बात को ध्यान में रखना बहुत ज़रूरी है।

इस प्रतिकूल वातावरण में शिक्षकों और शिक्षार्थियों के लिए एक अच्छी बात यह हुई है कि 'भाषा सीढ़ी' नामक एक नई परियोजना 'स्वैच्छिक राष्ट्रीय मान्यता योजना' के अंतर्गत आरम्भ की गई है। यदि किसी प्राथमिक स्कूल में हिन्दी पढ़नेवाले बच्चे पर्याप्त संख्या में हों तो हिन्दी की पढ़ाई शुरू

की जा सकती है। पर ऐसे स्कूल यहां है कहां ? अब अगले परिच्छेद में हिन्दी पढ़ने वालों की भाषिक स्थिति और हिन्दी शिक्षण की समस्याओं पर विचार किया जाएगा।

हिन्दी शिक्षार्थी समुदाय का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है-

1. मातृभाषा हिन्दी-भाषी परिवार के भारत में जन्मे और पढ़े-लिखे हिन्दी भाषी बच्चे। वे देवनागरी में साक्षर होते हैं।
2. मातृभाषा हिन्दी-भाषी परिवार के ब्रिटेन में जन्मे हिन्दी भाषी बच्चे। केवल रोमन लिपि में साक्षर।
3. मातृभाषा हिन्दी परिवार के ब्रिटेन में जन्मे अहिन्दी भाषी बच्चे (अंग्रेज़ी भाषी)। केवल रोमन लिपि में साक्षर।
4. दवितीय, तृतीय भाषा के रूप में अन्य भारतीय भाषा-भाषी बच्चे (जैसे पंजाबी, गुजराती, तमिल, तेलगू, मराठी परिवारों के बच्चे)। केवल रोमन लिपि में साक्षर।
5. तृतीय या चतुर्थ भाषा के रूप में मारिशस,फ़िजी या कैरेबियन के भारतीय मूल के क्रिओल भाषा-भाषी बच्चे जो केवल रोमन लिपि में साक्षर हों। कुछ लोग दक्षिण और पूर्वी अफ़्रीका के भी हो सकते हैं।
6. विदेशी भाषा के रूप में अंग्रेज़ी भाषी (गोरे) बच्चे।
7. विदेशी भाषा के रूप में अंग्रेज़ी भाषी (गोरे) वयस्क।

ब्रिटेन में जन्मे विरले बच्चे ही देवनागरी लिपि में साक्षरता घर से अर्जित कर के हिन्दी की स्वैच्छिक कक्षाओं में आते हैं। भारतीय मूल के (1-4) और अंग्रेज़ तथा कैरेबियन (5,6,7) शिक्षार्थियों में एक मुख्य अंतर है उनका हिन्दी से संपर्क। भारतीय परिवारों में पहली-दूसरी पीढ़ी की आपस में वार्तालाप की भाषा हिन्दी या और दूसरी भारतीय भाषाएं ही होती हैं। भारतीय बच्चों को इससे जो अदृश्य एवं अस्पष्ट लाभ होता है वह गोरे तथा मारिशस,फ़िजी या कैरेबियन शिक्षार्थियों को नहीं होता। इसके अलावा वे हिन्दी फ़िल्मों से भी प्रदर्शित होते हैं। कम से कम इन के शब्द भंडार में हिन्दी के बहुत सारे शब्द पहले से ही होते हैं। इन सब के बावजूद भी कुछ शिक्षार्थियों में हिन्दी ग्रहणशीलता की क्षमता भले ही सीमित हो, किंतु है तो, पर उत्पादकता या उच्चारणशीलता की क्षमता नहीं के बराबर होती है। होती भी है तो वे हिन्दी के संवाद का उत्तर अंग्रेज़ी का ही सहारा ले कर देते हैं। इन भाषा स्थितियों को ध्यान में रख कर ही शिक्षकों को हिन्दी शिक्षण युक्ति पर विचार करना होता है।

पाठ्य पुस्तकों का चयन

आरम्भिक कक्षाओं में शिक्षकों के लिए, वे चाहे कोई भी भाषा, विशेष कर विदेशी भाषा, कहीं भी पढ़ाते हों, विभिन्न स्तरों की पाठ्य पुस्तकों का सही चयन एवं सुव्यवस्थित उपयोग नितांत आवश्यक है। यहां जिस प्रक्रिया पर विचार किया जा रहा है वह है हिन्दी का अध्यापन, विशेष रूप से बच्चों के मन में लिखने-पढ़ने की रूचि पैदा करना । इस विषय में इतनी अधिक विविधता है

कि यदि प्रथम पाठ्य पुस्तकमाला के अंतर्गत कुछ प्रकाशित पुस्तकों को आम सहमति मिल भी जाए, जो फ़िलहाल नहीं है, तो भी यह संदिग्ध ही रहेगा कि कोई एक पाठमाला विद्यार्थियों, अध्यापकों, सांस्कृतिक तथा भौगोलिक संदर्भों और विभिन्न प्रयोजनों के लिए समान रूप से उपयोगी और प्रासंगिक हो सकती है। हिंदी के कुछ अध्यापक अपने विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुरूप ही पुस्तकें चाहेंगे, किंतु हिंदी की ऐसी पुस्तकों का विदेश में प्रकाशन आर्थिक कारणों से जटिल ही नहीं असंभव ही दिख रहा है। हिंदी शिक्षकों के साथ मिलकर हम गंभीरता पूर्वक इन वर्तमान स्थितियों पर गौर करते रहे हैं।

ब्रिटेन में उपलब्ध पुस्तकों के सर्वेक्षण पर आधारित विवरण

1. भाषा सीखने-सिखाने के लिए
   (क) भारत के हिन्दी प्रदेशों के स्कूलों के लिए प्रकाशित पुस्तकें।
   (ख)ब्रिटेन में विभिन्न स्तरों के लिए प्रकाशित थोड़ी सी पुस्तकें।
   (ग)भारत में स्कूलों के लिए अहिन्दी-भाषी शिक्षार्थियों के लिए लिखी गयी पुस्तकें।
   (घ) विदेशों में अहिन्दी-भाषी व्यस्क शिक्षार्थियों के लिए लिखी गयी पुस्तकें।
2. शैक्षिक सिद्धान्तों पर आधारित पुस्तकें
   (क)अक्षर (देवनागरी लिपि),ध्वनि, व्याकरण एवं प्रयोग के लिए।
   (ख)स्थिति-परक, संप्रेषणात्मक भाषा का प्रयोग दैनिक वार्तालाप के लिए।
   (ग)अंग्रेज़ी-हिन्दी, हिन्दी-अंग्रेज़ी शब्दकोष।
3. संस्कृति एवं इतिहास पर आधारित पुस्तकें
   पारम्परिक, धार्मिक, लोक कथाएं जिनमें भारत का सांस्कृतिक इतिहास होता है।

शैक्षिक दृष्टिकोण से ब्रिटेन में पले विद्यार्थियों के लिए किताबों का चयन एवं लेखन यहां के संदर्भ और ऊपर लिखी अन्य बातों को ध्यान में रख कर करना होगा। भारत में प्रकाशित पुस्तकें जो यहां मिलती हैं वे शिक्षकों के लिए तो ठीक हैं, पर वे यहां के शिक्षार्थियों की उम्र और योग्यता पर आधारित न होने के कारण उनके लिए उतनी उपयोगी नहीं होतीं। कुछ शब्दावली और कुछ-कुछ सम्मिश्र वाक्य संरचना की जानकारी न होने के कारण बच्चों को कठिनाई होती है। इन पुस्तकों में ब्रिटेन में बड़े होनेवाले बच्चों के दैनिक जीवन के अनुभवों पर आधारित विषयों की कमी होती है। यदि 'मंकी पज़ल', 'द ग्रैफ़लो', 'स्लीपिंग ब्यूटी', 'चार्ली एण्ड द चाकलेट फ़ैक्ट्री' जैसी छोटे बच्चों की किताबें या उनके अनुवाद हिन्दी में उपलब्ध हों तो अल्पसंख्यक हिन्दी समुदाय के बच्चों में अवश्य ही हिन्दी के प्रति रुचि पैदा हो जाएगी। साथ ही ब्रिटिश संस्कृति, जिससे यहां के बच्चे और व्यस्क परिचित होते हैं, उस पर आधारित पुस्तकों की आवश्यकता होगी। भारतीय संस्कृति तो उनकी अस्मिता के लिए ज़रूरी है ही, पर शिक्षार्थियों में जब थोड़ी भाषिक परिपक्वता आ जाए तब वैसी किताबें ज़्यादा उपयुक्त होंगी। इसका अर्थ यह नहीं है कि बच्चे या व्यस्क भारतीय संस्कृति एवं इतिहास पर किताबें अंग्रेज़ी में न पढ़ें। और इसका अर्थ यह भी नहीं कि भारतीय समाज एवं परिवार के जो आपसी संबंधों को प्रदर्शित करने के हमारी संस्कृति से जुडे शब्द हैं उन्हें

पाठ्य सामग्री में स्थान न दें। मेरे सुझाव का तात्पर्य सिर्फ़ यह है कि हिन्दी की आरम्भिक पाठ्य सामग्री में शिक्षार्थियों के वास्तविक जीवन को प्रतिबिम्बित करने का प्रयोजन नितान्त आवश्यक है, नहीं तो उनकी दिलचस्पी ही धीरे-धीरे लुप्त होती जाएगी और भाषा विस्थापन की प्रक्रिया शुरू हो जाएगी। कुछ हद तक तो यह शुरू हो ही चुकी है। आपसी संबंधों में संबोधन के शब्द जैसे 'चाचा-चाची, मामा-मामी, बुआ-फूफा' सिकुड़ कर 'अंकल और आंटी' बन गए हैं। हिन्दी की बंधुतावादी शब्दावली अर्थ एवं हमारी संस्कृति पर आधारित व्यवहार की कुंजी है। हर संबोधन शब्द अर्थगर्भित है, मामा का रिश्ता चाचा के रिश्ते से फ़र्क है। 'चचेरी और ममेरी बहन' और 'बहन' में बहन संज्ञा है, 'चचेरी, ममेरी' विशेषण हैं। चूँकि तीसरी पीढ़ी का बच्चा रिश्ते की इस बारीकी का सांस्कृतिक मूल्य नहीं जानता वह कहता हुआ सुना जाता है- 'वह मेरा, मेरी कज़्न है'। भारतीय अंग्रेज़ी ने मानक ब्रिटिश अंग्रेज़ी से मुंह मोड़ कर इन रिश्तों को जीवित रखने के लिए नए प्रयोग शुरू किए 'कज़्न ब्रदर' और 'कज़्न सिस्टर' का। अभिभावकों को इस स्थिति का जायज़ा गम्भीरता से लेना चाहिए। शिक्षकों को पाठ्य सामग्री में इन शब्दों के प्रयोग पर अभ्यास बनाना बहुत लाभप्रद होगा। इसी भाषा और संस्कृति के अनुबंध की चर्चा करते हुए मैं अब हिन्दी के सर्वनामों के प्रयोग के विषय़ के बारे में थोड़ी सी बात करूंगा। य़हां मैं केवल मध्यम पुरुषवाचक सर्वनाम, 'तुम' और 'आप' की बात करूंगा। 'आप' आदर सूचक माना जाता है, 'तुम' अनादर सूचक तो नहीं है, पर इसका प्रयोग अपने से बड़ों को सम्बोधित करने में नहीं किया जाता, ईस्वर को छोड़ कर। अंग्रेज़ी में 'आप' और 'तुम' दोनों के लिए केवल एक सर्वनाम है 'यू'। आप्रवासी बच्चे 'आप' के प्रयोग के महत्व को भूलते जा रहे हैं। इसके साथ-साथ उनमें एक और प्रवृत्ति पनपने लगी है। अपने से बड़ी बहन या भाई को वे उनके नाम से सम्बोधित करने लगे हैं जबकि उन्हें दीदी, जीजी, दादा, भइया शब्दों का प्रयोग करना चाहिए। कुछ हद तक यह अंग्रेज़ी भाषा एवं संस्कृति का प्रभाव है।

लेखक एवं शिक्षकों को साक्षरता एवं वाचन पर भी ध्यान देना होगा क्योंकि इन बच्चों के भाषा अनुभव में अंग्रेज़ी का विशेष प्रभाव रहेगा। उदाहरण के लिए हिन्दी और अंग्रेज़ी स्वन व्यवस्था को देखें। दोनों में अल्पप्राण और महाप्राण स्पर्श व्यंजन हैं, पर उनमें महत्वपूर्ण अंतर है जिसका शिक्षार्थियों के हिन्दी के उच्चारण अर्जन पर प्रभाव पड़ता है। हिन्दी में सघोष तथा अघोष अल्पप्राण और महाप्राण स्पर्श व्यंजन के युग्म होते हैं जैसे 'क-ख,ग-घ,च-छ,ज-झ,ट-ठ,ड-ढ,त-थ,द-ध,प-फ,ब-भ'। अंग्रेज़ी में सघोष महाप्राण स्पर्श व्यंजन नहीं होते। फलस्वरूप आरम्भ में बच्चों को 'घर' शब्द के उच्चारण में 'घ' ध्वनि उच्चारित करने में कठिनाई होती है। उसी प्रकार 'झ,भ' ध्वनियां भी मुश्किल होती हैं। अंग्रेज़ी में दंत्य स्पर्श और मूर्धन्य स्पर्श की ध्वनियों के न होने से भी हिन्दी में कठिनाई होती है। न्यूनतम युग्म जैसे 'गिरना-घिरना, बाग़-बाघ, जूठा-झूठा, डाल-ढाल' के अभिरचना अभ्यास से शिक्षार्थियों को लाभ होता है। कुछ ध्वनियां अरबी, फ़ारसी, अंग्रेज़ी के शब्दों के साथ हिन्दी में आ गई हैं जैसे 'फ़, ज़, ख़'। भारत में कुछ हिन्दी क्षेत्रों में ये ध्वनियां लुप्त हो गई हैं और हिन्दी की पत्रिकाओं में भी नहीं दिखतीं, पर मानक हिन्दी में अभी भी इनका अपना महत्व है। हमारे अंग्रेज़ी-भाषी बच्चों को 'फ़, ज़,' मे तो कोई परेशानी नहीं होगी, पर उन्हें 'ख़' सिखाना

पड़ेगा। जो बच्चे फ़्रेन्च पढ़ रहे होते हों तो उन्हें दंत्य ध्वनियों 'त,द', और कंठ्य व्यंजन 'ख़' की ओर निर्देशित करने से इन ध्वनियों को अर्जित करने में लाभ होगा।

ध्वनियों के साथ-साथ लेखक एवं शिक्षकों को व्याकरण और प्रयोग पर भी ध्यान देना होगा। हिन्दी की वाक्य संरचना में 'क्रिया, पक्ष और काल' पर ध्यान देना आवश्यक है। पूर्णतावाची पक्ष तथा अपूर्णकालिक पक्ष अंग्रेज़ी में भी है, और कर्ता का रूप दोनों वाक्य संरचना में समान ही होता है। हिन्दी में दोनों में फ़र्क है। सकर्मक क्रिया के साथ पूर्णतावाची पक्ष वाले वाक्यों में कर्ता के साथ ने का प्रयोग बहुत ज़रूरी है। उदाहरण के लिए – 'मणि सुबह में हिन्दी पढ़ता है'। 'मणि ने सुबह में हिन्दी पढ़ी'। अकर्मक क्रिया वाले वाक्यों में पूर्णतावाची पक्ष होने पर भी ऐसा नहीं होता, उदाहरण के लिए 'मणि अभी तक नहीं सोया'। ने के इस प्रयोग पर विशेष ध्यान देना होगा क्योंकि कुछ छेत्रों में ने का प्रयोग अपूर्णकालिक पक्ष वाले वाक्यों में भी होता है, जैसे 'मणि ने बाज़ार जाना है'। व्याकरण की दृष्टि से यह मानक हिन्दी के नियमों के अनुसार उचित नहीं है। प्रोक्ति विश्लेषण से हमें पता चलता है कि 'ने' का प्रयोग कर के वक्ता ने संकेत कर दिया है कि वह किसी घटित घटना की बात करने जा रहा है। 'मणि ने बाज़ार जाना है' से कुछ क्षण के लिए गलतफ़हमी हो सकती है। अंग्रेज़ी में कर्ता के साथ पूर्णतावाची पक्ष वाले वाक्यों में 'ने' की तरह कुछ नहीं होता।

हिन्दी व्याकरण में शब्दरूप प्रक्रिया की दृष्टि से **'चाहना'** क्रिया अंग्रेज़ी-भाषी हिन्दी शिक्षार्थियों के लिए महत्वपूर्ण है। 'चाहना' और क्रियाओं की तरह है, पर चाहिए के दो रूप और प्रयोग हैं, एक तो 'चाहना' सामान्य क्रिया की तरह, दूसरा वृत्तिवाचक सहायक क्रिया की तरह। उदाहरण के लिए- 'मणि हिन्दी की किताब चाहता है'। 'मणि को हिन्दी की किताब चाहिए'। दोनों वाक्यों का अर्थ एक समान ही है। चाहिए का दूसरा प्रयोग और अर्थ बिलकुल फ़र्क है। 'मणि को हिन्दी की किताब ख़रीदनी चाहिए'। शिक्षकों को चाहिए कि शिक्षार्थियों का ध्यान दो बातों की ओर आकृष्ट कराएं, एक तो कि 'चाहिए' क्रिया अपना रूप नहीं बदलती, दूसरे कि इसका प्रयोग जब सुझाव और दायित्व के अर्थ में होता है तब कर्ता को विकारी कारक (को) की तथा वाक्य में एक और मुख्य क्रिया की आवश्यकता होती है, जैसे 'खरीदनी', जिसका रूप कर्ता के बदले कर्म के लिंग और वचन से निर्धारित होता है। अगले वाक्य से संज्ञा और क्रिया के बीच की अन्विति के नियम का पता चलेगा, 'मणि ने अनुपम को किताब दी'। इस वाक्य में एक गौण कर्म है 'अनुपम', और एक मुख्य कर्म है 'किताब'। यहां कर्ता और गौण कर्म दोनों विकारी कारक के साथ हैं इसलिए मुख्य कर्म ही क्रिया का लिंग और वचन निर्धारित कर रहा है। यहां यह ध्यान रखने की बात है कि व्याकरण पर आधारित वाक्य संरचना का यह विश्लेषण प्राथमिक स्तर के शिक्षार्थियों के लिए उचित नहीं होगा। विश्वविद्यलयों के विदेशी विद्यार्थी जो स्कूलों में एक या दो विदेशी भाषाएं सीखने का अनुभव कर चुके होते हैं उनके लिए तो यह ठीक है। जो विद्यार्थी, भारतवंशी या अन्य, माध्यमिक विद्यालयों में विदेशी भाषाएं सीख रहे होंगे उनके लिए भी ठीक होगा। मैं निर्देशात्मक / अनुशासनमूलक व्याकरण की वकालत नहीं कर रहा, शैक्षिक व्याकरण /

प्रकार्यात्मक व्याकरण की कर रहा हूं जिसमें व्याकरण नियमों को रट कर भाषा सीखने की प्रक्रिया को नहीं कहते, व्याकरण भाषा की रूप रेखा, वाक्य संरचना तथा प्रयोग को समझने की प्रक्रिया को कहते हैं। इसे व्यावहारिक व्याकरण भी कहा जा सकता है। इसमें व्यतिरेकी व्याकरण की सहायता ली जाती है। जो भाषा शिक्षार्थी की मातृभाषा या जिस भाषा में शिक्षार्थी को मातृभाषा की तरह क्षमता अर्जित हो गई है उसमें और लक्ष्य भाषा की उपयुक्त स्थिति में तुलना लाभप्रद होती है। ब्रिटेन के संदर्भ में हम हिन्दी-अंग्रेज़ी की बात कर रहे हैं।

अब मैं संक्षेप में भाषा शिक्षण विधियों की बात करूंगा। भाषा शिक्षण विधियों का सम्बंध भाषा शिक्षण एवं भाषा अधिगम के उद्देश्यों से भी है। प्रश्न यह है कि ब्रिटेन में हिन्दी शिक्षण की क्या अवश्यकता है और किसके लिए? अपने आलेख के आरम्भ में मैं ने हिन्दी शिक्षार्थी समुदाय को सात कोटियों में विभाजित किया था। उनमें छठे वर्ग के गोरे बच्चों की संख्या बहुत कम है। भाषा अधिगम के उद्देश्यों में तीन प्रमुख हैं- आर्थिक कारण, सांस्कृतिक कारण, और विरासती अस्मिता के संरक्षण का कारण। अकादमिक कारण भी हो सकता है क्योंकि कुछ लोग भारतीय इतिहास, राजनीति, हिन्दी भाषा एवं साहित्य के छेत्रों में शोध और शिक्षण करना चाहते हैं। कुछ की दिलचस्पी पत्रिकारिता में होती है। विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी पढ़ने वाले छात्र अधिकतर आर्थिक कारणों से, सरकार के विभिन्न मंत्रालयों में नौकरी के लिए, विशेष कर विदेश मंत्रालय में, विश्वविद्यालयों में या भाषा संस्थानों में हिन्दी पढ़ते हैं। ये हैं सातवीं कोटि के शिक्षार्थी। पांचवी कोटि के शिक्षार्थियों के पूर्वज सदियों पहले भारत से मारीशस, फ़िजी, कैरेबीयन आदि देशों में ब्रिटिश सरकार की उपनिवेशवादी प्रतिरोपण नीति के शिकार बने थे। इस कोटि के कुछ लोग जो ब्रिटेन में प्रवासी की तरह बस गए हैं उनके पौत्रादि अब अपने पूर्वजों की मातृभाषा भोजपुरी-अवधी-हिन्दी एवं मातृभूमि से जुड़ने के लिए हिन्दी सीखना चाहते हैं। पर उनकी जातीय तथा राष्ट्रीय अस्मिता का संबंध भारत से नहीं रह गया है। इसके साथ ही इनका हिन्दी सीखने का उद्देश्य भी सीमित है। चौथी कोटि के शिक्षार्थियों में हिन्दी का भारतीयता एवं भारतीय राष्ट्रीयता की अस्मिता से जुड़ने की भावना बहुत प्रबल है। इस कोटि के सभी छात्रों की अपनी-अपनी मातृभाषा है, पर इनमें हिन्दू पंजाबी ही हैं जो हिन्दी को द्वितीय मातृभाषा के रूप में मानते हैं और सबसे अधिक संख्या में इसका अध्ययन भी करते हैं। इसके पीछे इन बच्चों के अभिभावकों के मन में भाषायी राजनीति है या भारतीय संस्कृति इस पर मैं यहां टिप्पणी करना नहीं चाहता। पंजाबी और हिन्दी का शब्द भंडार और उनकी वाक्य संरचना भी एक-दूसरे के बहुत नज़दीक हैं। शिक्षकों को पाठ्य सामग्री बनाते समय इस से लाभ उठाना चाहिए। तीसरी कोटि के बच्चों को मैं ने अहिन्दी भाषी इसलिए कहा है क्योंकि इनकी पहली भाषा, गृह भाषा, मातृभाषा अंग्रेज़ी हो गयी है। यदि इनके माता-पिता आपस में भी अंग्रेज़ी में ही बातचीत करते हैं तब उनके बच्चे हिन्दी की कक्षा में केवल अंग्रेज़ी में प्रवीणता के साथ आते हैं। पहली और दूसरी कोटि के शिक्षार्थी कक्षा में विश्वस्त हिन्दी भाषी बन कर आते हैं। इनके और इनके अभिभावकों के मन में यह विश्वास रहता है कि हिन्दी और हमारी विरासतीय अस्मिता में अटूट सम्बंध है।

हिन्दी की कक्षाओं में आने वाले शिक्षार्थियों में जब इतनी विविधता है तब शिक्षक कौन सी शिक्षण विधि अपनाएं? ब्रिटेन के हिन्दी शिक्षकों के लिए यह बहुत बड़ी चुनौती है। भाषा शिक्षण विधियों में मैं केवल प्रत्यक्ष विधि, वार्तालाप विधि और द्विभाषी विधि की ओर आपका ध्यान आकृष्ट करूंगा। सब से पहले शिक्षकों को कक्षा में उपयुक्त हिन्दी भाषाई वातावरण का निर्माण करना होगा। शिक्षार्थियों से बातचीत के दौरान अंग्रेज़ी का कम से कम प्रयोग करना होगा। यह हम सब जानते हैं कि भाषा का मूल स्वरूप मौखिक होता है। सभी छात्रों का मुख्य उद्देश्य हिन्दी सुनना, समझना, बोलना है, और होना चाहिए भी। शिक्षकों का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए हिन्दी सुनाना, समझाना और बुलवाना। ऐसी स्थिति में कक्षा में 'प्रत्यक्ष विधि' को 'वार्तालाप विधि' से जोड़ना पड़ेगा। प्रत्यक्ष विधि से पारंपरिक अभिरचना अभ्यास को निकाल देना होगा। मेरे अनुभव में रटने-दुहराने से भाषा नहीं सीखी जाती। यदि शिक्षार्थी कुछ सीख भी लें तो वह सतही ही होगा, न उसका कोई व्यावहारिक लाभ होगा, न उससे उनका कोई संज्ञानात्मक या भाषा विकास हो पाता है। कुछ कक्षाओं में शिक्षार्थियों को सुनने, समझने, बोलने के भाषा कौशल ग्रहण करने से पहले ही देवनागरी लिपि एवं वर्तनी पढ़ाना शुरू कर देते हैं। कुछ माँ-बाप बच्चे के लेखन कौशल से प्रभावित हो जाते हैं, पर वे भूल जाते हैं कि ब्रिटिश माहौल में सुनने, समझने, बोलने में प्रवीणता सब से ज़रूरी है। 'वार्तालाप विधि' के साथ हम 'भाषा अंतर्वेशन' को भी जोड़ सकते हैं। इसका एक दूसरा रूप है समग्र 'शारीरिक अनुक्रिया प्रणाली'। अंग्रेज़ी में इसे 'टोटल फ़िज़िकल रेसपौंस' विधि कहते हैं। जिन शिक्षार्थियों को हिन्दी नहीं आती उनको कक्षा में शुरू-शुरू में इस विधि से पढ़ाया जा सकता है, पर शिक्षक के लिए यह गहन परिश्रम का काम है। जब शिक्षार्थियों को इतनी हिन्दी आ जाए कि वे आपस में और शिक्षक से बिना अंग्रेज़ी की बैसाखी लिए हिन्दी में बातचीत कर सकें तब शिक्षक उन्हें व्याकरण और व्यतिरेकी (हिन्दी-अंग्रेज़ी) व्याकरण के आधार पर हिन्दी की ध्वनियां और उनका उच्चारण, वाक्य संरचना समझा सकते हैं। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि शिक्षण में ध्वनियां, अक्षर, शब्द, वाक्य का क्रमानुसार पाठ्य सामग्री में रखना छात्रों के लिए न दिलचस्प होगा न बहुत लाभकारी। 'वार्तालाप विधि' में व्यावहारिक भाषा और शिक्षार्थियों के अनुभव एवं रुचि पर आधारित विषयों का चयन होता है। हां, पाठों में पढ़े शब्दों का पुनरावलोकन करना और नए प्रयोगों को पढ़ाना शब्द, अर्थ एवं प्रयोग बोध कराना सशक्त भाषा शिक्षण का उदाहरण है।

सफल हिन्दी शिक्षण के लिए हिन्दी शिक्षकों के प्रशिक्षण की सुविधाएं भी अत्यन्तावश्यक है। ब्रिटेन के उच्च शिक्षा संस्थानों में हिन्दी शिक्षक बनने के लिए पी.जी.सी.ई. जैसी कोई सुविधा नहीं है। सफल हिन्दी शिक्षक बनने के लिए हिन्दी शिक्षण एवं हिन्दी के प्रचार-प्रसार के प्रति समर्पित होना आवश्यक है। उनके लिए हिन्दी व्याकरण का ज्ञान और शिक्षण में मानक हिन्दी के स्वरूप का ज्ञान भी बहुत अनिवार्य है।

अब प्रश्न उठ सकता है परीक्षा और पाठ्यक्रम का। परीक्षा में सफल होना शिक्षा में हम सब का लक्ष्य होता है, और होना भी चाहिए। पर गंभीरता से सोचने की बात यह है कि क्या

हिन्दी सीखने का लक्ष्य वहीं पर सीमित हो जाना चाहिए? मेरी समझ में यह बहुत बड़ी भूल होगी। ब्रिटेन में विदेशी या विरासती केल्टिक भाषा शिक्षण का इतिहास बहुत सफलता का नहीं रहा है। यहां की वेल्श और गेलिक भाषाओं को पुनर्जीवित करने का और जीवित रखने का प्रयास किया जा रहा है। वेल्श और गेलिक अपने क्षेत्रों में सीमित जगहों और कुछ परिवारों में सिमट कर रह गई है। अंग्रेज़ी के स्वामित्व, आर्थिक एवं राजनैतिक प्रभुत्व के कारण राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के द्वारा सभी राजकीय सुविधाओं के बावजूद भी इन भाषाओं का भविष्य उतना उज्ज्वल नहीं दिख रहा है जितना होना चाहिए था। अब रही बात हिन्दी अध्ययन-अध्यापन की। आधुनिक भाषा के राष्ट्रीय पाठ्यक्रम में होने के बावजूद भी जब जी.सी.एस,ई, और ए लेवेल की परीक्षाओं में ही हिन्दी नहीं रह गई तब इसका शैक्षिक महत्व उतना नहीं रह गया। दूसरी परीक्षाएं जो उपलब्ध हैं भी उनका पाठ्यक्रम न ब्रिटिश संदर्भ में, न ही ब्रिटिश भारतवंशी बच्चों को ध्यान में रख कर गठित किया गया था। जब बच्चे एक हाथ में फ़्रेञ्च की किताब लेते हैं और दूसरे में भारत में प्रकाशित हिन्दी की तब उन्हें थोड़ी निराशा तो होती ही है। हिन्दी की पढ़ाई स्वैच्छिक कक्षाओं में शनिवार-रविवार के दिन होती है जब कि फ़्रेंच,जर्मन आदि भाषाओं की मुख्य धारा के अंतर्गत स्कूलों में। फ़्रेंच,जर्मन आदि भाषाओं के शिक्षक भाषा शिक्षण में प्रशिक्षित होते हैं, पर हिन्दी के नहीं। इन प्रतिरोधी स्थितियों के बीच भी अनेक शहरों में हिन्दी की कक्षाएं चल रही हैं। हिन्दी अध्ययन-अध्यापन का मुख्य श्रेय है उन शिक्षकों को जो बड़ी निष्ठा से अपना योगदान दे रहे हैं। साथ ही साथ उन थोड़े से अभिभावकों को भी जो समय निकाल कर बच्चों को कक्षाओं में ले जाते हैं। सभी सुविधाओं के होते हुए भी अधिकतर शिक्षार्थी इन भाषाओं में प्रवीणता नहीं ग्रहण कर पाते। जो शिक्षार्थी जी.सी.एस,ई, और ए लेवेल की परीक्षाओं में उत्तीर्ण भी हो जाते हैं वे धीरे-धीरे अपनी प्रवीणता खो बैठते हैं क्योंकि कक्षा के बाहर इन भाषाओं से उनका संपर्क कभी नहीं होता। न समाज में, न परिवार में ये भाषाएं बोली जाती हैं, और फ़्रांस, जर्मनी जा कर बहुत कम शिक्षार्थी भाषा अंतर्वेशन का अनुभव करते हैं। फ़्रेंच या जर्मन के साथ उनकी भाषाई या जातीय अस्मिता भी नहीं जुड़ी है। हिन्दी की स्थिति फ़र्क है। कम से कम हिंदी-भाषी परिवारों में तो यह अपेक्षा की जाती है कि घरों में वार्तालाप की भाषा हिंदी होगी। जिन परिवारों में माँ-बाप बच्चों से हिन्दी में बातचीत नहीं करते उनमें भी बच्चे भाषा सुनते तो रहते हैं। निष्क्रिय दिवभाषी एक भाषी से अच्छे होते हैं। पर निष्क्रिय दिवभाषी से एक भाषी बनने में देर नहीं होती। इन बच्चों की सम्प्रेषात्मक आवश्यकताएं अंग्रेज़ी पूरी करने लगती है। कई हिन्दी परिवारों में यह अक्सर पाया जाता है कि हिन्दी भाषा का पीढ़ीवत अनवरत निस्सरण नहीं होता। इस भाषा विस्थापन की स्थिति को रोक कर भाषा संरक्षण का भार शिक्षकों को सौंप देना न्यायसंगत नहीं लगता। दुनिया भर में भाषा विस्थापन के क्षेत्र में शोध करनेवालों ने यह पाया है कि यदि मातृभाषा का निष्कासन घर और परिवार से हो जाता है तब वह वापस नहीं आती।

हिन्दी शिक्षण की समस्यायें और हिन्दी अध्यापकों की योजना, समस्या व समाधान

अर्चना पैन्यूली

हिन्दी भाषा की उत्पत्ति व विकास

लगभग 1500 से 500 ईसा पूर्व वैदिक संस्कृत एक भाषा से दूसरी भाषा – लौकिक संस्कृत, प्राकृत, पाली, अपभ्रंश, सौरसेनी, महाराष्ट्री, अर्धमागधी व मागधी भाषाओं में रूपान्तरित हुई। हिन्दी सौरसेनी के माध्यम से विकसित हुई और इंडो-आर्यन समूह की भाषा मानी जाती है। मुगलकाल के दौरान फारसी के साथ हिन्दी-ऊर्दू बोलचाल की भाषा बनी और स्वतंत्रा आन्दोलन में हिन्दी का जोरदार विकास हुआ और यह देश की राजभाषा बन गई। हिन्दी शब्दावली में फारसी, तुर्की, अरबी, पुर्तगाली और अंग्रेजी शब्दों का समावेश है। यद्यपि वेद, उपनिषद जैसे समृद्व भारतीय साहित्य की सृष्टि प्राचीन काल से ही होती आयी है, लेकिन मानक हिन्दी, यानि खड़ी बोली का विकास अगर देखा जाये तो मात्र एक हजार पुराना है। हमारा प्राचीन साहित्य अवध व ब्रजभाषा में है क्योंकि वे मानक हिन्दी, जिसे खड़ी बोली कहा जाता है, से पहले विकसित हो गई थी। विशुद्व हिन्दी साहित्य तो मात्र सात सौ वर्ष पुराना है जब तेरहवी सदी में सूफी कवि अमीर खुसरों ने इसका उपयोग किया। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी को एक व्यवस्थित स्वरूप देकर समृद्वशाली बनाने में काफी प्रयत्न किये।

अपने एक हजार वर्ष की जीवन यात्रा में मानक हिन्दी ने नि:सन्देह काफी लंबी मंजिलें तय की है। आज हिन्दी एक सशक्त, सुगठित व्याकरण सम्मत और समृद्घ भाषा की सभी अनिवार्यताओं से परिपूर्ण है। देवनागरी एक विशिष्ट लिपि है। मानक हिन्दी हिन्दुस्तान के नौ राज्यों की एक आधिकारिक भाषा के अतिरिक्त एक विशाल जनसंख्या की मातृभाषा व पूरे हिन्दुस्तान की एक संपर्क भाषा है। दुनिया में हिन्दी बोलने वालों की संख्या तीसरे नंबर पर है - पचास करोड़ के करीब लोग हिन्दी भाषी है। विश्व स्तर की प्रमुख भाषाओं में हिन्दी भी एक है।

मगर हिन्दी में जो पोटेन्शियल, संभावनायें है, दुर्भाग्य से हिन्दी को वह स्थान नहीं मिल पाया है। दक्षिण राज्यों के द्रविण हिन्दी अपनाना नहीं चाहते। हिन्दी राज्यों में ही हिन्दी की स्थिति का ह्रास हुआ है। बच्चों के लिये व गैर हिंदी भाषियों के लिये हिंदी मुख्यतय: टीवी चैनल्स व बॉलीवुड की ही भाषा बन रही है। साहित्यिक क्षेत्र में हिन्दी की स्थिति दयनीय है। यह सच है कि हिन्दी एक भाषा ही नहीं, हमारी संस्कृति व पराम्पराओं की अभिव्यक्ति है। सो देश-विदेश में चलते सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक क्रियाकलाप एवम् गतिविधियां हिन्दी विकास में नि:सन्देह सहायक हैं। बॉलीवुड फिल्में हिन्दी के अस्तित्व को बनाये हुये है। मगर यह हिन्दी का अनौपचारिक स्तर है। अगर अनौपचारिक स्तर से हट कर औपचारिक स्तर पर हिन्दी का विश्लेषण करे तो हिन्दी की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है।

हिन्दी शिक्षण की समस्यायें

वर्णमाला व उच्चारण सम्बन्धित मुददे: हिन्दी सीखने वालों को भाषा सम्बन्धित बहुत सी परेशानियों का सामना पड़ता है। वर्णमाला लंबी है। मात्रायें हैं। लिंग निर्धारण में दिक्कत होती है। क्रिया लिंग के हिसाब से बदल जाती है। द्यवह जा रही है।' द्यवह आ रहा है।' सजीवों के अतिरिक्त बेजान वस्तुओं को भी स्त्रीलिंग व पुलिंग से सम्बोधित किया जाता है, मसलन द्यलडडू खाया'। द्यजलेबी खायी।' गैर हिन्दी भाषियों के लिये हिन्दी सीखने के लिये संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। चन्द्रबिन्दु व अनुस्वार के प्रयोग को लेकर दुविधा बनी रहती है। संयुक्त व्यंजन के उच्चारण व जानकारी की दुविधा, जैसे ज्ञान, विज्ञान। पांच प्रकार के द्यर' - जैसे प्रकार में, अर्जुन में, धर्म गृहणी एवम् ऋषि वाला द्यर' हैं। इनके उच्चारण में कोई विशेष फर्क नहीं है। तीन किस्म के द्यस' हैं, जिनके उच्चारण में भेद बहुत कम हैं। गैर हिन्दी भाषियों के लिये क्या कहे हिन्दी भाषियों को भी सारी जिन्दगी अन्तर समझ में नहीं आ पाता और वे इसे व्यवहार में नहीं ढाल पाते।

मगर फिर भी देवनागरी में अन्य भाषाओं की तुलना में दोष बहुत कम हैं, इन्हें सुधाारा जा सकता है, बदला जा सकता है। हिन्दी एक वैज्ञानिक व तार्किक भाषा है, जिसकी एक विशेषता यह है कि हर ध्वनि के लिये एक निश्चित वर्ण है व वह सदैव निश्चित है। अगर द्यन' व द्यट' नट होता है तो द्यक' व द्यट' कट, द्यत' व द्यट' तट। अंग्रेजी में पांच स्वर में 20 ध्वनियां हैं व 21 व्यजंनों में 24 ध्वनियां हैं। यानि 26 वर्णो की 41 ध्वनियां हैं। बी' यू' टी' बट होता है पर पी' यू' टी' पट नहीं होता वह पुट होता है।

पाठयक्रम व बुनियादी सुविधायें: व्यवहारिक तौर पर हिन्दी शिक्षण में मुख्य समस्या यह है कि पाठ्यक्रम में बच्चों में भाषा व साहित्य के प्रति रूझान उत्पन्न करने की नितान्त कमी है। पुस्तके रोचक नहीं है। ढंग के अध्यापक नहीं हैं। शिक्षण विधि व संसाधन उचित नहीं है। बच्चों में हिन्दी पढ़ने की जिज्ञासा या ललक पैदा नहीं की जाती। पेशे से एक शिक्षिका होने के नाते मैंने यूरोपीय स्कूलों में देखा कि छोटी कक्षाओं से वर्ग के हिसाब से पाठयक्रमों में लेख, कथा संग्रह व उपन्यास शामिल रहते हैं। छोटी कक्षाओं में बच्चों से रीडिंग करवाई जाती है। बुक्स कलब होते हैं। पेरेन्टस व बड़ी कक्षाओं के विद्यार्थी छोटी कक्षाओं जैसे के-वन व ग्रेड-वन के बच्चों के साथ बैठ कर रीडिंग करते हैं। एक लेवल की बुक पढ़कर बच्चे दूसरी लेवल की बुक पढ़ते है और एक सत्र में बच्चें चार से छः लेवल्स की पुस्तकें पढ़ चुके होते हैं। उन्हें फोनिक्स का अभ्यास करवाया जाता है। बच्चों का व्यक्तिगत मूल्यांकन होता है।

कक्षा छः से बच्चों को एक सत्र में कम से कम छ-आठ पुस्तकों का अध्ययन, समीक्षा लिखना व उनके ऊपर चर्चा करनी पड़ती है। दसवीं कक्षा तक आते-आते एक विद्यार्थी कथा साहित्य की कम से कम सौ पुस्तकें पढ़ चुका होता है। फलस्वरूप बाल्यकाल से ही उनमें पढ़ने की जिजीविषा जाग्रात हो जाती है।

भाषा व साहित्य उन्हें बोझिल नहीं, रोचक लगने लगता है। टिहरी, गढ़वाल विश्विद्यालय के प्रोफेसर श्री राकेश नौटियाल का कहना है भारत में विश्वविद्यालय के भी विद्यार्थी भी बुक रिव्यू नहीं लिख सकते।

हिन्दी के प्रति लोगों का रवैया: कई हिन्दी अध्यापक कहते हैं कि हिन्दी शिक्षण की समस्याओं में एक अप्रत्यक्ष कारण है कि लोग हिन्दी पढ़ना आवश्यक नहीं समझते। हिन्दी के प्रति खुद को गोरवन्तित महसूस नहीं करते। यहां अपने कुछ अनुभव लिखने के लिये प्रेरित हो रही हूँ। अभी दिसम्बर में अपनी पिछली भारत यात्रा के दौरान दिल्ली की एक अंग्रेजी स्कूल की शिक्षिका से मेरा मिलना हुआ। वे कहती हैं कि उनके स्टाफ में एकमात्र वह हैं जो हिन्दी पत्रिकायें पढ़ती हैं। वह अपने घर के पास की एक लाइब्रेरी से हिन्दी पत्रिकायें लेती हैं। पढकर वह अपने किशोर आयु की लड़कियों को बोलती है कि जाओ ये पत्रिकायें लाइब्रेरी में लौटा आओ। बच्चे छुपा कर पत्रिकायें लाईब्रेरी में लौटाने जाते हैं ताकि उनका कोई मित्र या साथी न देख ले। नहीं तो वे उपहास बनायेगें: द्यतुम्हारी मम्मी क्या हिन्दी मेगजीन्स पढ़ती है? अंग्रेजी नहीं पढ़ती।'

जब मैं तेरह वर्ष पूर्व नई-नई डेनमार्क आयी थी तो एक दिन एक हिन्दुस्तानी महाशय मेरे घर तशरीफ लाये। मेरे ड्राइंगरूम में सजी हिन्दी पुस्तकों को देख कर बोले: द्यपिछले तीस सालों से मैं डेनमार्क में रह रहा हूँ। कई हिन्दुस्तानियों के घर गया हूँ । आपका घर पहला घर है जहां मुझे हिन्दी पुस्तकें व पत्रिकायें दिखायी दे रही है।' जिस घर में अंग्रेजी के बजाये हिन्दी अखबार, पत्रिकायें व पुस्तकें पड़ी रहती है वह परिवार भारतीय समाज में विशिष्ट नहीं माना जाता। हिन्दी कुलीन लोगों की नहीं, अनपढ़ों की भाषा मानी जाती है। क्यों हिन्दी को लेकर हिन्दुस्तानियों में हीन भावना है? क्यों वे हिन्दी पढ़ने से कतराते हैं?

विदेशों में हिन्दी शिक्षण के मुद्दे: डेनमार्क स्थित द्यस्टूडियो स्कोले' नामक एक प्रतिष्ठित लेंगुएज स्कूल में विदेशियों को हिन्दी पढ़ाने वाली श्रीमती रजनी बहल कहती हैं कि विदेशियों को हिन्दी सीखाने में जो उन्हें एक दिक्कत होती है वह यह कि सरल भाषा में हिन्दी उपन्यास लोगों के लिये उपलब्ध नहीं हैं, जैसे डेनिश, स्पेनिश व अन्य भाषाओं में है। किशोरों के लिये जिस हिसाब से अंग्रेजी व अन्य यूरोपीय भाषा में रोचक उपन्यास लिखे जाते हैं, हिन्दी में संख्या न के बराबर है।

श्रीमती कुमुद माथुर डेनमार्क में बीस वर्षो तक प्रवासी भारतीयों के बच्चों (पॉच से पन्द्रह आयुवर्ग) को हिन्दी सीखाने में संलग्न रही। बच्चों को हिन्दी सीखने की यह सुविधा डेनिश सरकार की तरफ से उपलब्ध थी। बच्चों का हिन्दी स्कूल किसी तरह घिसटते घिसटते अन्ततः बंद हो गया। श्रीमती माथूर का कहना है कि स्कूल बंद होने का एक कारण यह भी था कि अपने भारतीय बच्चों में अपनी मातृभाषा पढ़ने की उतनी ललक नहीं रहती जितनी अन्य देशों, जैसे जापानी, अरबी व चाईनीज बच्चों में रहती है। उनके स्कूल वहां अभी भी चल रहे हैं। कुमुद माथुर के लिये सबसे बड़ी चुनौती हिन्दी में

बच्चों की रूचि बनाये रखने में थी, क्योंकि हिन्दी के प्रति हमारे हिन्दुस्तानियों में कोई श्रृद्वा नहीं। अभिभावक ही कहते हैं –द्यहमारे बच्चे हिन्दी पढ़ कर क्या करेगें?'

मातृभाषा को अप्रयाप्त महत्व : एक वैश्विक समस्या

अंग्रेजी विश्व की सभी भाषाओं पर प्रभुत्व जमा रही है। विश्व की कई भाषायें आज खतरे में हैं। कहा जा रहा है कि कुछ वर्षो उपरान्त विश्व में मौजूद लगभग सात हजार भाषाओं में से आधी भाषायें विलुप्त हो जायेगी क्योंकि नई पीढ़ी, यानि बच्चे उन्हें सीख नहीं रहे हैं। भाषा-संस्कृति विभाग रोसकिल्ड यूनीवर्सिटी डेनमार्क के प्रोफेसर टोव स्कटनब कंगस कहते हैं: द्ययह अति आवश्यक है कि बच्चे आरम्भिक शिक्षा अपनी मातृभाषा में प्राप्त करें। यदि किन्हीं परिस्थितियोंवश यह संभव नहीं है तो भाषा-विषयक विषयों में उनकी प्रमुख भाषा उनकी अपनी मातृभाषा होनी चाहिये ताकि वे अपनी भाषा को अच्छे से सीख सके। कई स्कूलों में बच्चों को अपनी भाषा सीखने के कोई अवसर नहीं है, बल्कि उनकी भाषा का वहां पूरा विरोध किया जाता है। बच्चे अपने विचार-भाव सबसे अच्छे ढंग से अपनी मातृभाषा में अभिव्यक्त कर सकते हैं। सर्वोच्च शैक्षिक उपलब्धियां वे अपनी भाषा में ही हासिल कर सकते हैं। अपनी मातृभाषा की कीमत पर बच्चों को दूसरी, एक विदेशी भाषा सीखने पर जोर देना मानवता के खिलाफ भी है। इसके लिये अभिभावक, स्कूल व शिक्षा प्रणालियां सभी दोषी है।

मैं एक आईबी वर्ल्ड स्कूल में अध्यापन करती हूँ। मातृभाषा शिक्षण के नये प्रयासों तहत आईबी वर्ल्ड प्रोग्राम ने पिछले साल स्कूलों में एक सरकुलर पास किया कि स्कूल बच्चों को अपनी भाषा सीखने के लिये अवसर प्रदान करे। छात्रों के द्विभाषी शिक्षण में सबसे पहले मातृभाषा में कौशल प्राप्ती हो या फिर दूसरी उसकी सबसे करीबी भाषा। आई डिपलोमा, यानि बारवीं बोड में बच्चे अपनी मातृ भाषा का चुनाव कर सकते हैं। मगर मैने देखा है कि कुछ भारतीय छात्र जो हिन्दी लेना चाहते हैं उनके लिये न तो अध्यापक उपलब्ध हैं और न ही संसाधन।

शिक्षाविदियों ने पता लगया जब कोई बच्चा जितने अधिक वर्ष अपनी मातृभाषा में शिक्षा हासिल करता है आगे चल कर वह अपनी भाषा के अलावा दूसरी प्रभावी भाषा जैसे अंग्रेजी, फ्रैंच या जर्मन आदि को भी अच्छे से समझता है। बच्चे जो द्विभाषी व बहुभाषी होते हैं, समाज व दुनिया को अच्छा परखते हैं। अपनी मातृभाषा में एक ठोस बुनियाद गढ़ना शैक्षिक विकास के लिये जरूरी है, साथ ही यह आगे चल कर एक अतिरिक्त भाषा सीखने में भी सहायक होती है। शिक्षाशाष्ट्री डा। कारलोस अल्बर्टो कहते हैं कि यह सही है कि ग्लोबललाइजेशने के इस युग में हम विश्व को समझे, दूसरी भाषायें व संस्कृति को बूझे, पर सबसे पहले अपने खुद के स्रोतों का तलाशिये, वहां से प्रेरणा हासिल करिये। दूसरों की भाषा व संस्कृति जानने से पहले अपनी भाषा व संस्कृति जाने। अगर कोई अपने प्रदेश से बाहर निवास कर रहा है तो मातापिता अपने बच्चों को उस क्षेत्र की भाषा के अतिरिक्त अपने बच्चों को अपनी मातृभाषा सीखने के भी अवसर प्रदान करें। एक शैशव का मस्तिष्क स्पंज की तरह होता है। अपने जीवन के आरम्भिक वर्षो में बच्चा दो-तीन भाषायें बड़ी आसानी से सीख सकता है अगर उसे अवसर प्राप्त हैं।

समाधान के लिये कुछ सुझाव

आज के डीजीटल युग के बच्चों के अनुरूप शिक्षा प्रणाली : समय के साथ मातापिता का अपने बच्चों को पालने-पोसने का तरिका बदल रहा है। आजकल के बच्चे पुराने जमाने के बच्चों से भिन्न हैं। वे डीजिटल युग के बच्चे हैं अपने अभिभावक व अध्यापकों से अलग तरह से पेश आते हैं। साधारणत: आजकल के बच्चे ज़्यादा होशियार व जागरूक हैं। वे कई काम एक साथ कर लेते हैं - म्यूजिक सुनना, टीवी देखना, होमवर्क करना, इन्टरनेट पर यार-दोस्तों के साथ चिटचेटिंग करना, एसएमएस भेजना, तकनीकी विकास में जो क्रान्ति आयी है उसका सबसे गहरा प्रभाव बच्चों पर पढ़ा है। स्कूल व अध्यापक भी तकनीकी में आये इस क्रान्ति से अछूते नहीं रह सकते। पढ़ाने की पुरानी, उपदेशात्मक रीति अपना महत्व खोती जा रही है। आजकल की शिक्षण विधि पारंपरिक सैद्घान्तों से अलग होकर बच्चों को खुद ही अन्वेषी होने को प्रेरित करे। विषय-वस्तु पर छानबीन कर अपनी खोज व अन्वेषण का क्लास के सामने प्रस्तुतीकरण कर अध्यापक की भूमिका निभाने में बच्चों को आंनद आता है, उन्हें एक आत्मतृप्ति मिलती है। उनकी यह चाहत कि स्कूल व कक्षा में सहपाठियों के बीच उन्हें कुछ मान्यता मिले, उनकी सराहना होये इसकी पूर्ति भी होती है।

अब तो आलम यह है कि अगर एक अध्यापक क्लास में खुद ही बोलता जाये तो उसे एक अच्छा अध्यापक नहीं समझा जाता। ब्लैकबॉर्ड टीचिंग, चॉल्क एंड टॉल्क आज के जमाने में प्रभावी शिक्षा पद्वति नहीं समझी जाती। प्रभावशाली शिक्षण के लिये जरूरी है कि टीचर अपने को लगातार बोलते रहने से रोके। अपने विद्यार्थियों को नये उदाहरणों व अन्तद्दरष्टि के साथ आने दे। बच्चे की कल्पना, अनुभव, सृजनशीलता व जो उसमें अनंत संभावनायें हैं उन्हें स्पेस दिया जाये। उनके विचारों व मनोभावों को प्रकट होने दे। यह आवश्यक है कि बच्चों को प्रयाप्त अवसर व चुनौती मिले जिससे वे सफलता हासिल करने के लिये प्रोत्साहित हो। आज अध्यापक गुरू व ज्ञानकर्ता नहीं, सुगमकर्ता है, जिसका काम ऐसा वातावरण उत्पन्न करना है कि बच्चे प्रेरित हो। अध्यापन पढ़ना-पढ़ाना नहीं, बल्कि सीखना-सिखााना हो गया है। अब तो बच्चे की अभिव्यक्ति व अधिकार की ही बात ज़्यादा है।

यह भी समझने की आवश्यकता है कि आज बच्चों के लिये मानक हिन्दी का क्या अभिपाय है। समय के अनुसार हिन्दी को विकसित करने की आवश्यकता है। पचास साल पहले हिन्दी में संस्कृत शब्दों का वर्चस्व था। आज मानक हिन्दी में अंग्रेजी शब्द कोशों का है। समय के साथ भाषा का भी वैश्वीकरण हो रहा है। अगर कोई शब्द मेरे भाव अच्छे से व्यक्त कर सकते हैं तो उसका प्रयोग करने से हिचकना क्यों। अब हमें यह स्वीकार कर लेना चाहिये कि अंगे्रजी आज एक ग्लोबल लेंगुएज है। लोग कुछ शब्द व भाव अंग्रेजी भाषा में बेहतर समझते हैं, तो उसका प्रयोग करने से झिझक क्यों? हमें हिन्दी को उदार बनाना पड़ेगा। अंग्रेजी में हजारों शब्द हर साल जुड़ते हैं जिनमें बहुत सारे दूसरी भाषाओं से आते हैं। भाषा शिक्षण के लिये एक व्यवहारिक विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण का होना अनिवार्य है। भाषा शिक्षण के लिये एक अन्तर आमतौर पर करना अनिवार्य कि भाषा व्यक्ति की मातृभाषा है या उसकी दूसरी भाषा

या फिर विदेशी भाषा है। यह भी ग़ौरतलब है कि आज के बच्चे क्या, किस विधि व भाषा में पढ़ना चाहेंगे। जब तक शिक्षण में अध्यापक उनके नये सोच-विचार व उनके जीवन में आये आधुनिकरण को नहीं दर्शायेंगें, उनको शिक्षण आकर्षित नहीं करेगा। पढ़ाने के लिये एक मार्डन अप्रोच, एक आधुनिक तकनीकी शब्दावली का प्रयोग करना जरूरी है।

विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रयोग: बच्चे चाहे दुनिया के किसी भी छोर में रहे, वे प्रतिभा, योग्यता व बुद्‌विमता में एक-दूसरे भिन्न होते हैं। उनका परिवेश अलग होता है। उनकी रूचियां व सीखने की क्षमतायें अलग होती है। अध्यापक मात्र एक शिक्षण विधि लेकर नहीं चल सकता। उसे एक क्लास में भिन्न- भिन्न परिवेश से आये भिन्न-भिन्न कौशलता व क्षमता रखने वाले बच्चों को पढ़ाने के लिये एक साथ कई तरीके अपनाने पड़ेगें, जहां सभी बच्चों को अपनी योग्यता दिखाने के पूर्ण अवसर मिल सके। शिक्षा बहुआयामी हो। अध्यापक कई प्रकार के कार्य (असाइनमेन्ट्‌स) का चुनाव करें जिन्हें करने में बच्चे अपने विविध कौशल व प्रतिभा – लिखित, वाक्पटुता, सजृनात्मक, ड्रामा-अभिनय आदि - का प्रयोग कर सके। कुछ बच्चे किसी क्षेत्र में अच्छे होते हैं तो कुछ बच्चे किसी में। रिसर्च कहती है कि कुछ बच्चें केवल छोटे समूह में ही खुद को अभिव्यक्त कर पाते हैं।अतएव कभी-कभार बच्चों को छोटे-छोटे समूहों में बांट कर पढ़ाना चाहिये जहां सभी बच्चों को अपने विचार खुल पर प्रस्तुत करने के अवसर मिल सके। बच्चे की मोखिक अभीव्यक्ति बाधित न हो। विविध अध्यापन नीतियां, नई युक्तियां उपयुक्त शिक्षण संसाधन क्लास में शिक्षा प्राप्ति व सीखने के लिये उर्वरक का काम करती हैं।

अब जमाना नहीं रहा कि अध्यापक व्याख्यान करता रहे। बच्चों को पाठ पढ़ाये, कविता सुनाये, कुछ प्रश्नों के उत्तर लिखवायें और बच्चे उन्हें रट ले। नियोजित वादविवाद, चर्चा-बहस, प्रोजेक्ट वर्क, बुक रिव्यू, ऐनालीसिस - विश्लेषण आज की शिक्षा प्रणाली की अहम पद्‌वतियां बन गयी हैं। विषय की खोज, एनसाइक्लोपीडिया व अन्य उल्लेखित पुस्तकों की छानबीन, इन्टरनेट अन्वेषण, क्लास के सामने प्रेजेन्टेशन या फिर किसी कृति-साहित्य का एनालीसिस कर बुक रिव्यू आलोचनात्मक लेख व निबन्ध लिखना बच्चों की स्वतंत्र चिन्तन व सृजनात्मक शक्ति का विकास करता है। बच्चें की अभिव्यक्तिशीलता व वाग्मिता पैनी होती है। प्लेवे विधि, हिन्दी भाषा पर रचनात्मक कार्यशालायें बच्चों में हिन्दी के प्रति रूचि जगायेगी। किसी भाषा शिक्षण के लिये तकनीक, विकास व प्रभावशीलता पर गौर करना अनिवार्य है। विदेशियों व अप्रवासी भारतीयों के लिये हिन्दी शिक्षण एक विदेशी भाषा के रूप में होना चाहिये। कई स्तरों - शुरूआत, मध्यवर्ती, उन्नत व त्वरित - में उन्हें शिक्षण प्रदान होना चाहिये।

शिक्षण विधि की परियोजना में यह निर्भर करेगा कि विद्‌यार्थी का परिवेश क्या है। क्या सुविधायें उसे उपलब्ध है? जैसे प्रोफेसर राकेश नौटियाल का कहना है कि कुछ भारतीय गांवों व कस्बों में छात्र इतने गरीब घरों के हैं कि शुल्क व पाठ्‌य पुस्तकें तक वहन नहीं कर सकते, रिर्सच प्रोजेक्ट के लिये लेपटोप वगैरह कैसे खरीदेगें। क्लास साइज भी बड़ा होता है, जिससे हर तरह की शिक्षण विधि अपनानी मुश्किल है। यह एक राष्ट्रीय मुद्‌दा है जो सारी शिक्षा प्रणाली को प्रभावित करता है और जिसका समाधान

सरकार व बुद्विजीवियों को शिक्षण नीतियों के तहत करना होगा। इसके लिये बजत में उचित निधि को निर्धारण करना जरूरती है।

हिन्दी शिक्षण सहायता व संसाधनः हिन्दी शिक्षण को अधिक प्रभावी बनाने के लिये पाठ्य पुस्तकों के आलावा बहुविध उपकरणों का इस्तमाल, जैसे इलेक्ट्रॉनिक टीचिंग एड्स, एडुकेशनल (शैक्षिक) डीवीडीज, ऐनीमेशन फिल्में व ऑडियो विज़ुअल सामग्री का प्रयोग आज के जमाने में हर परिवेश में संभव है। हिन्दी अध्यापकों की समय-समय पर संकाय व व्यवसायिक बैठकों, शैक्षिक सम्मेलनों व शिक्षण प्रशिक्षण कार्यशालायों में सहभागिता होने से वे समय के साथ स्वयं को अपडेट कर सकते हैं। छात्रों के लिये एक विशिष्ट पाठयक्रम, रोचक पुस्तकों का चयन। बच्चों की कुशलता का आकलन मात्र टेस्ट-पेपर्स व परिक्षाओं से न कर प्रोजेक्ट कार्य, प्रस्तुतियां, पुस्तक समीक्षाओं आदि से उनकी कुशलता का आकलन होना चाहिये। छात्रों की हिन्दी पढ़ने, सुनने, बोलने व लिखने की दक्षतायें आंकी जाये।

हिन्दी शिक्षण व हिन्दी प्रोत्साहन की अर्न्तसम्बन्धता

चाहे हम शिक्षण पद्वति में कितना ही सुधार करले जब तक कोई प्रोत्साहन नहीं होगा, लोग हिन्दी से कतरायेगें। जिला शिक्षा एवम् प्रशिक्षण संस्थान हरिद्वार की वरिष्ठ प्रवक्ता श्रीमती सरोजनी नौटियाल कहती हैं कि उनकै छात्र साहित्यिक हिन्दी के होते हुये भी साहित्य का कोई प्रसंग नहीं सुना पाते। कोई कविता नहीं, साहित्य से संबधित कोई अंश नहीं है उनके पास सुनाने के लिये। ऐसा लगता है कि उनके ऊपर हिन्दी थोपी गई है।

हिन्दी को जब तक व्यवहारिक तौर पर उपयोगी नहीं बनायेगें बच्चे हिन्दी सीखने के लिये लालायित नहीं होगें। कहा जाता है कि जब तक कोई भाषा पेट की भाषा न बने महत्व नहीं पा सकती। उदाहरण के तौर पर डेनिश मात्र पांच मिलियन लोगों की भाषा है और पूरे डेनमार्क में छायी है। यहां तक कि इमीग्रेन्टस व मल्टीनेशनल में काम करने आये उच्च शिक्षित विदेशियों को भी डेनिश सीखने के लिये बाध्य होना पड़ता है। हिन्दी पांच सौ मीलियन्स की भाषा है और हिन्दी को वह महत्व प्राप्त नहीं है जो डेनिश या डेनमार्क जैसे कई छोटे मुल्कों की भाषाओं को है। इसका कारण वे भाषायें रोजगार की भाषा है, व्यापार की भाषा है।

यह बात सही है कि अंग्रेजी एक बहूमुखी व अन्तरराष्ट्रीय भाषा है। आज के युग में विभिन्न समुदाओं के बीच पारस्परिक विचार-विमर्श व व्यापार बढ़ जाने से अंग्रेजी का उपयोग व महत्व और भी बढ़ गया है। फिर हमारे अतीत के सबधों की वजह से और विश्व में मौजूद मांग की वजह से अंग्रेजी हम हिन्दुस्तानियों के लिये हमेशा एक महत्वपूर्ण भाषा रहेगी। अंग्रेजी के प्रति उदासीनता दिखा कर हमें अपनी प्रगति नहीं रोकनी। लेकिन हिन्दी के मुल्य पर अंग्रेजी नहीं सीखनी। दोनों भाषायें साथ-साथ चलनी चाहिये। गैर अंग्रेजी भाषा देशों में भी अब लोग अधिक से अधिक संख्या में अंग्रेजी सीखने लगे हैं। लेकिन अंग्रेजी उनकी अपनी राष्ट्रीय भाषा के महत्व को कतई प्रभावित नहीं करती। हमारे देश में

अंग्रेजी हिन्दी ही नहीं हमारी समस्त क्षेत्रीय भाषाओं को तहस-नहस कर रही है। सन् 1975 से अंग्रेजी माध्यम वाले स्कूलों की संख्या दिन पर दिन हिन्दुस्तान में बढ़ती जा रही है। हिन्दी माध्यम वाले स्कूलों में ज़्यादातर उन्हीं के बच्चे शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं जो अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों का खर्चा वहन नहीं कर पाते। अगर आज देखा जाये तो हिन्दी का दरोमदार गरीबों के कन्धों पर है। यदि आप समाज के मध्य व उच्च वर्गीय लोगों के बच्चों को ले वे अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में शिक्षा हासिल कर रहें हैं। अंग्रेजी अखबार व साहित्य पढ़ते हैं। अगर हिन्दी अमीर लोग नहीं पढ़ेगें तो कैसे इसका विकास होगा।

निष्कर्ष

जनता उसी ओर रूख करेगी जो उसको अधिक लाभकारी दिखेगी। इसके लिये जड़ पर प्रहार करना पड़ेगा। शिक्षण पद्वति में सुधार व नई पीढ़ी के मन में हिन्दी के प्रति जिज्ञासा व अभिमान पैदा करना। हिन्दी शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिये प्रत्यक्ष व सुसाध्य, दोनों प्रकार के उपाय करने पड़ेगें। प्रत्यक्ष उपायों में स्कूलों में शिक्षण का एक समुचित ढांचा, रोचक पाठ्य पुस्तकें, अध्यापकों का उचित प्रशिक्षण। कक्षाओं का साइज एक निधारित सीमा में । पाठ्यक्रम में लघु व दीर्घ रोचक हिन्दी उपन्यास समावेश करने व बच्चों को उनकी समीक्षा करवाने से बच्चों में रीडिंग हेबिट डेवलप हो सकती है। सही उच्चारण के लिये ऑडियो लेशन्स। युग इलेक्ट्रोनिक हो चला है तो हिन्दी को हाईटेक भाषा बनाना ताकि अंग्रेजी कीबोर्ड व वर्गमाला पर से सभी प्रकार की निर्भरता छूटे।

सुसाध्य उपायों में ऐसा माहौल पैदा किया जाये कि अच्छी किताबों का विकास हो। स्कूल व शैक्षिक संस्थानों के बाहर भी हिन्दी सीखने का माहौल हो। हिन्दी भाषा के प्रयोग को लोकप्रिय बनाने के लिये उचित गतिविधियां व कार्यक्रमों को बढ़ावा। हिन्दी सोसाईटीज का गठन। साहित्यिक कार्यक्रमों के लिये मंच प्रदान करना। सार्वजनिक बोल सत्र (पब्लिक स्पीकिंग सैसन्स) व लेखन प्रतियोगिताओं का आयोजन। हिन्दी पुस्तकों की रोचक लाइब्रेरी स्थापित करना। पढ़ने के लिये कमरे की सुविधा आदि। हिन्दी को व्यवहारिक तौर पर उपयोगी बनाना ताकि इसे अपना कर लोग रोजी कमा सके, स्वयं को सम्मानित व गोरवन्तित महसूस कर सके। इन सब प्रयासों से शिक्षण तो बेहतर होगा ही साथ हिन्दी की स्थिति भी अच्छी बनेगी।

मास्को विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाने का अनुभव

बोरिस जाखारीन, लुदमीला खोखलोवा

एशियाई व अफ्रीकी अधययन संसथान जहां हिंदी के अलावा अरबी, फारसी, चीनी, तुर्की, जापानी, वियतनामी इत्यादि भाषाएं पढ़ाई जाती हैं मास्को विश्वविद्यालय का एक अंश है। विद्यालय में चार विधियां (फैकल्टीज) हैं: आर्थिक, समाजशास्त्रीय, ऐतिहासिक और फिलोलोजिकल जहां भाषा शास्त्र और साहित्यिक आलोचना की पढ़ाई होती है। जो विद्यार्थी इतिहास चुनते हैं, उनके पाठ्यक्रम में दुनिया भर का इतिहास, भारतीय इतिहास इत्यादि ऐतिहासिक विषय शामिल होते हैं। भारतीय भाषा शास्त्र सीखनेवालों को आधुनिकतम भाषा विज्ञान के सिद्धांत विस्तार से पढ़ना पड़ता है। साहित्यिक आलोचना में दिलचस्पी लेनेवाले विद्यार्थियों को आलोचना के प्रमुख सिद्धांत और दुनिया भर के साहित्य का इतिहास पढाया जाता है इत्यादि। इतिहास, भाषा शास्त्र और साहित्यिक आलोचना के विद्यार्थियों के लिये संसकृत सीखना आवश्यक समझा जाता है। सारे विद्यार्थियों के लिये - चाहे वे समाजशास्त्र, आर्थशास्त्र या भाषा शास्त्र सीखते हों - पश्चिमी भाषाएं (जिन में मुख्य अंग्रेजी है) और कम से कम दो भारतीय भाषाएं सीखनी जरूरी है।

भारतीय भाषाओं के विभाग में पहली भारतीय भाषा के तौर पर हिंदी और तमिल पढ़ाई जाती हैं। दूसरी भारतीय भाषा के रूप में उर्दू, बंगला, मराठी, पंजाबी चुने जा सकते हैं। हिंदी पहली भारतीय भाषा के तौर पर चार साल के दौरान बी.ए. स्तर पर और दो साल के दौरान एम.ए. स्तर पर पढ़ाई जाती है। पढ़ाई खतम करने के बाद अच्छे विद्यार्थी शब्दकोष की मदद से कोई भी हिंदी टेक्स्ट पढकर रूसी में अनुवाद कर सकते हैं, चाहे यह समाचार पत्र में लिखी खबरें हों, राजनीतिक समीक्षक की कोई टिप्पणी हो या किसी प्रसिद्ध लेखक की लिखी कहानी या निबंध हो। रूसी से हिंदी में भी विभिन्न प्रकार के टेकस्टों का अनुवाद करना विद्यार्थियों के लिये आवश्यक समझा जाता है।

हिंदुस्तान से दूर रहते हुए सब से मुश्किल काम है विद्यार्थियों से बोलचाल का अभ्यास कराना। इस लिये हमारे पाठ्यक्रम में शुरू से ही विभिन्न विषयों पर बोलने को विशेष ध्यान दिया जाता है। हम भरसक प्रयत्न करते हैं कि पहले ही पाठ से विद्यार्थी को यह महसूस हो जाए कि वह कुछ बोल सकता है। विद्यार्थी में यह महसूस करवाना अध्यापक अपना परम कर्तव्य समझता है। इस लिये हमने हिंदी पढ़ाने के लिये ऐसी पाठ्यपुस्तकें चुनी हैं जो हिंदी बोलने का अभ्यास कराने के लिये सब से लाभदायक लगते हैं। ये हैं रूपर्ट स्नेल और साईमन वाईटमन की किताब "टीच योरसेल्फ हिंदी" और केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा प्रकाशित "हिंदी रिकार्ड/कैसेट की वाचन-पुस्तिका"। दोनों किताबों में संवाद हैं जिन की बुनियाद पर विद्यार्थी अपने संवाद बनाकर पहले ही पाठ से आसान बातचीत कर सकते हैं।

हमारे अध्यापकों ने दोनों उपरोक्त पाठ्यपुस्तकों के लिये अतिरिक्त अभ्यास बनाये जिन की सहायता से हिंदी व्याकरण की कठिनाइयां दूर की जा सकती हैं। यह समझने के लिये कि हिंदी सीखते समय रूसी विद्यार्थी किस प्रकार की ग़लतियां कर सकते हैं हम ने हिंदी और रूसी भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया। यह अध्ययन ज़रूरी था क्योंकि रूपर्ट स्नेल और साईमन वाईटमन की किताब उन

विद्यार्थियों के लिये लिखी है जिन की मातृभाषा अंग्रेजी है। अंग्रेजी और रूसी बोलनेवाले विद्यार्थियों को हिंदी भाषा सीखते समय अलग अलग मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के तौर पर रूसी विद्यार्थियों के लिये 'अपना' जैसे सर्वनाम का प्रयोग करना कठिन नहीं है कयोंकि रूसी में भी ऐसा सर्वनाम है जबकि अंग्रेजी बोलनेवाले विद्यार्थियों को समझाना पड़ता है कि यह सर्वनाम कैसे इस्तेमाल किया जाए। उल्टा अंग्रेजी वयाकरण में नियामित रूप से यह अंतर प्रकट किया जाता है कि क्रिया का व्याकरण करनेवाला खुद कर्ता है या यह व्यापार किसी मध्यस्थ के जरिए किया जाता है। आदमी चाहे खुद कुछ सीता है या किसी से सिलवाता है – रूसी में एक ही क्रिया इस्तेमाल किया जाता है।

इस बात के बावजूद कि रूसी में प्रेरणार्थक क्रियाएं नहीं हैं, रूसी विद्यार्थियों को सीने और सिलवाने का अंतर समझाना कोई मुश्किल काम नहीं है। प्रेरणार्थक क्रिया का मतलब हर विद्यार्थी आसानी से समझता है। यह भी समझाना मुश्किल नहीं है कि अगर क्रिया सकर्मक है तो सामान्य, आसन्न और पूर्ण भूत काल में कर्ता के साथ 'ने' परसर्ग लगाना जरूरी है। लेकिन एक बात व्याकरण का नियम समझाना और समझना और दूसरी बात ऐसे अभ्यास कराना जिन की मध्यम से मातृभाषा में अनुपस्थित व्याकरण का अंतर सीखी जानेवाली भाषा में स्वचालित आ जाए। अक्सर यह होता है कि व्याकरण का नियम समझने पर भी विद्यार्थी बोलते और लिखते समय ग़लतियां करते हैं। वे खुद अपनी ग़लतियां ठीक कर सकते हैं क्योंकि व्याकरण का नियम जानते हैं, लेकिन ग़लतियां न आने देने के लिये खास अभ्यास बनाना बहुत जरूरी है। बनाकर विद्यार्थियों से कराना भी कोई आसान काम नहीं है कयोंकि व्याकरण का अभ्यास करना विद्यार्थी के लिये सब से बोरिंग काम है।

जब विद्यार्थी हिंदी सीखने हमारे पास आते हैं तो उन के लक्ष्य अलग अलग होते हैं। किसी को मास्को विश्वविद्यालय की डिग्री प्राप्त करने की इच्छा है। किसी ने भारतीय इतिहास, भारतीय संस्कृति और साहित्य के बारे में बहुत कुछ पढ़ा और ज़्यादा जानना चाहता है, किसी के मां-बाप कूटनीतिज्ञ हैं और वह भी विदेश मंत्रालय में काम करना चाहता है। लेकिन किसी भी विद्यार्थी का हिंदी सीखने का लक्ष्य कैसा भी क्यों न हो शुरू से हर लड़की और हर लड़के को हिंदी सीखने का शौक होता है। बाद में ऊब पैदा हो सकती है और निराशा। निराशा तब पैदा होती है जब विद्यार्थियों को पता चलता है कि समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र के क्षेत्रों में ही नहीं, इतिहास और भाषा शास्त्र के क्षेत्रों में भी अंतर्राष्ट्रीय स्तर का अनुसंधान अंग्रेजी में किया जाता है, कि हिंदुस्तान की यात्रा करते समय अंग्रेजी से काम चलता है। निराशा और ज़्यादा बढ़ती है जब विद्यार्थी किसी हिंदी बोलनेवाले से मिलके अपना ज्ञान इस्तेमाल करने की कोशिश करते हैं लेकिन संवादकारी अंग्रेजी में जवाब देता है।

इस निराशा को दूर करने के लिये अध्यापकों को बहुत कुछ समझाना पड़ता है। मिसाल के तौर पर यह कि कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहां विश्लेषण के लिये सामग्री हिंदी ही में मिल सकती है। उदाहरण के तौर पर भाषा शास्त्र के विद्यार्थियों के लिये हिंदी में लिखे मानक हिंदी के व्याकरण ही नहीं हिंदी बोलियों के व्याकरण भी पढ़ना जरूरी है। समाजशास्त्र के विद्यार्थियों को आम लोगों से बात करने के लिये, टी.वी. आदि जनसंपर्क साधनों द्वारा प्रसारित राजनीतिक वाद-विवाद समझने के लिये अच्छी हिंदी आनी चाहिये। हर विद्यार्थी को - चाहे वह अर्थशास्त्र का विशेषज्ञ बनना चाहता हो या प्राचीन इतिहास सीखना चाहता हो - भारतीय जनता की मानसिकता समझने के लिये, भारतीय जीवन समझने के लिये हिंदी में

लिखा गद्य और पद्य पढ़ना बहुत ज़रूरी है। और अंततः हिंदुस्तानी लोग कितनी अच्छी अंग्रेजी क्यों न बोलते हों उनके साथ तभी असली दोस्ती बनाये रखने की ज़्यादा संभावनाएं हैं जब उनकी मातृभाषा में संपर्क होता है। ये सब और बहुत ज़्यादा प्रबल तर्क सुनकर कुछ विद्यार्थियों को हिंदी सीखने का उत्साह फिर आता है और अध्यापक को बोरींग व्याकरण के अभ्यास कराने का एक और मौका मिलता है। लेकिन अध्यापक अच्छी तरह समझते हैं कि इस मौके का दुरुपयोग करना नहीं चाहिये, इस लिये बोलचाल के अभ्यासों को कोई दिलचस्प रूप प्रदान करना बहुत ज़रूरी है।

बुनियादी पाठ्यपुस्तक पढ़ने पर हम विद्यार्थियों को एक-दो फिल्में दिखाते हैं और एक जासूसी उपन्यास पढ़ाते हैं। फिल्म और जासूसी उपन्यास असली भारतीय संसकृति का बहुत अच्छा उदाहरण नहीं देते, पर भाषा पढ़ाने के लिये वे इस लिये लाभदायक समझे जाते हैं कि उनकी शब्दावली सीमित है और विद्यार्थी बार बार शब्दकोष के बिना मतलब समझ सकते हैं। फिल्म देखने का एक और फ़ायदा यह है कि ध्वनि अभिलेखन समझने की आदत पड़ जाती है जो लिखित टेकस्ट समझने से बहुत ज़्यादा मुश्किल होता है।

आम तौर पर हम तथा कथित 'फार्मूला' फिल्में चुनते हैं। ऐसी फिल्मों में शब्दावली सीमित होती है, बहुत नाच-गाने होते हैं जो आम तौर पर विद्यार्थियों को पसंद आ जाते हैं। 'फार्मूला' फिल्में चुनने का एक और कारण यह है कि उसके कथानक और संवादों से खेलना आसान है जबकि गंभीर फिल्म के कथानक, नायकों और संवादों पर मजाक करना कोई अच्छी बात नहीं है।

सब से पहले हम क्लास में विद्यार्थियों के साथ पूरी फिल्म देखते हैं। हमारा पहला लक्ष्य यह होता है कि हर विद्यार्थी फिल्म का हर वाक्य समझ सके और दोहरा भी सके - वह कितना लंबा क्यों न हो। इसके बाद विद्यार्थी घर पर फिल्म का पूरा टेकस्ट लिख लेते हैं। अध्यापक रूसी में कुछ मुशकिल वाक्य बनाकर विद्यार्थियों को हिंदी में अनुवाद करने के लिये देता है। शर्त यह होती है कि अनुवाद करते समय सिर्फ फिल्म के शब्द और वाक्य इस्तेमाल किये जाएं। इस तरह फिल्म के संवाद अच्छी तरह याद किये जा सकते हैं। फिल्म के सारे शब्द और वाक्य अच्छी तरह याद करके हम खेलने लगते हैं। विद्यार्थी पहले कुछ दृश्य (सीन) बिलकुल इसी तरह दोहराने की कोशिश करते हैं जैसे वे फिल्म में आये थे। कुछ समस्याएं भी होती हैं। मिसाल के तौर पर दो-तीन लोग एक ही नायक/नायिका की भूमिका अदा करना चाहते हैं और किसी को दूसरे नायक/नायिका की भूमिका अदा करने की इच्छा नहीं है। लड़कों की कमी भी एक समस्या होती है, खास करके फिलोलोजिकल फैकल्टी में जहां ज़्यादातर लड़कियां आती हैं।

समस्याओं का समाधान करके विद्यार्थी फिल्म के आधार पर अपने छोटे नाटक बनाते हैं, अपने दृश्यों में अतिरिक्त नायकों को शामिल कराते हैं या फिल्म के नायकों को लेकर ऐसे संवाद और कहानियां बनाते हैं जिन की घटनाएं फिल्म में मौजूद नहीं हैं और जैसा सिनारियो लेखक की दृष्टि से हो भी नहीं सकतीं। हर एक विद्यार्थी दूसरों से ज़्यादा अच्छा सीन बनाने की कोशिश करता है। रचनात्मक कार्य की कोई सीमा नहीं, सिर्फ दो शर्तें होती हैं : एक - हंसानेवाली चीज बनानी चाहिये; दो - फिल्म की शब्दावली प्रयोग करना जरूरी है। वैसे तो एक और शर्त हैः ठीक हिंदी बोलना।

कुछ अध्यापकों का विचार है कि अगर विदेशी भाषा बोलनेवाले को रोककर ग़लतियां ठीक करना तो वह घबरा जाएगा और रुककर फिर बाद में कुछ बोल नहीं पाएगा। ऐसे अध्यापकों का खयाल यह है कि शुरु से विद्यार्थी जितनी मरजी ग़लतियां करके कुछ न कुछ बोले, बाद में ठीक हिंदी अपने आप आ जाएगी। हम ऐसे विचारों से सहमत नहीं हैं। हम सोचते हैं कि अपने आप कुछ नहीं आता। अगर प्यार से ग़लती ठीक करके फिर विद्यार्थी से सही वाक्य दोहराने के लिये कहना तो वह जल्दी अच्छी हिंदी सीखेगा। हमारे विद्यार्थी पढ़ाई के इस तरीके के आदी हो चुके हैं और अगर कोई बाहर का अध्यापक आकर ग़लतियां ठीक नहीं करता तो उसे लापरवाह समझते हैं।

जासूसी उपन्यास भी फिल्म की तरह हंसते-खेलते पढ़ाया जाता है। विद्यार्थी उपन्यास के टुकड़ों को बुनियाद बनाकर नये शब्द इस्तेमाल करके छोटे-मोटे नाटक बनाते हैं। उपन्यास में जिन घटनाओं का या नायकों का वर्णन नहीं हुआ उनका वर्णन करते हैं। उदाहरण के तौर पर जासूस का अगला-पिछला खानदान क्या हो सकता है, वह जासूस कैसे बना, उपन्यास खत्म होने के बाद नायकों और खलनायकों को क्या हुआ आदि।

इस तरह एक जासूसी उपन्यास पढ़ने और एक-दो फिल्में देखने के बाद हंसने-खेलने का सिलसिला खत्म हो जाता है और गंभीर टेक्सट पढ़ने का समय आ जाता है। कुछ प्रसिद्ध लेखकों की रचनाएं इकटठा करके हमने एक रीडर बनाई। कहानियों का चुनाव करते हुए हम ने इस बात का ख़्याल रखा कि उन के माध्यम से छात्रों को भारत की संस्कृति और भारत की आधुनिक समस्याओं की भी ज़्यादा से ज़्यादा ज्ञान प्राप्त हो सके। इस रीडर में कहानियों का क्रम ऐसा रखा है कि सरल भाषा में लिखी कहानियां आरंभ में रखी हैं और जिन कहानियों की भाषा कठिन है उनको बाद में रखा गया।

दूसरे साल के विद्यार्थियों को हम भीष्म साहनी, कृश्नन चंदर और अमरकांत की ऐसी कहानियां पढ़ाते हैं जो सरल भाषा में लिखी हैं। तीसरे वर्ष के छात्रों के लिये हम मोहन राकेश, कमलेश्वर, काशीनाथ सिंह, प्रेमचंद, राजकमल चौधरी आदि लेखकों की कहानियां चुनते हैं। चौथे साल के विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिये हम निर्मल वर्मा, रघुवीर सहाय, कृष्ण बलदेव वैद, उदयप्रकाश अदि लेखकों का प्रयोग करते हैं जिनकी भाषा थोड़ी कठिन होती है। एम.ए. के छात्रों को इन सब लेखकों के साथ साथ समकालीन नये लेखकों की रचनाओं का भी परिचय दिया जाता है।

रीडर में कहानियों से पहले हर लेखक का परिचय और उसकी रचनात्मकता के बारे में एक संक्षिप्त टिप्पणी भी दी गयी। हर कहानी से कई अभ्यास और शब्दकोश जुड़े हैं। मुख्य अभ्यासों में निम्नलिखित प्रकार के अभ्यास शामिल हैं: कहानी में मिले नये शब्द उपयोग करके हिंदी से रूसी में और रूसी से हिंदी में अनुवाद करना, हिंदी के लोकोक्तियों और मुहावरों का इस्तेमाल करके वाक्य बनाना, नये शब्दों के समानार्थक और विपरीतार्थक शब्द लिखना, कहानी में शामिल शब्दों को उठाकर उन से कोई दूसरी काल्पनिक घटना या कहानी बनाना, मुख्य पात्रों के चरित्र का वर्णन करना आदि।

हमारी खुशकिस्मती यह है कि हिंदी पढ़ाने में हमें सुशिक्षित भारतीय अध्यापकों की मदद मिलती है। हमारे भारतीय विभाग के अध्यापकों में एक हिंदुस्तानी कवि और अनुवादक है जो विद्यार्थियों से साहित्यिक आलोचना के विषयों पर बहुत दिलचस्प वाद-विवाद करवाते हैं। भारतीय राजदूतावास की बहुत अनुभवी अध्यापिका दिलचस्प सवाल तैयार करके हमारे विद्यार्थियों को पढ़ाने आती है। हम सब

भरसक प्रयत्न करते हैं कि विद्यार्थी कुछ सीख के यांत्रिक तौर पर न दोहराएं लेकिन प्राप्त हुआ ज्ञान रचनात्मक तरीके से इस्तेमाल करें। इस लिये हम विद्यार्थियों को अपने विचार व्यक्त करने के लिये प्रोत्साहित करते हैं। कभी कभी उनके विचार भारतीय अध्यापकों के विचारों से अलग हैं। मिसाल के तौर पर कुछ लम्हे पहले 'पलाश के फूल' नामक अमरकांत की लिखी कहानी पर वाद-विवाद हुआ। 'पलाश के फूल' किस का प्रतीक है? हमारे विद्यार्थी बोलते थे कि जिस प्रकार पलाश के फूलों में कोई खुशबू नहीं है उसी प्रकार मुख्य पात्र की जिंदगी में कोई मतलब नहीं है, कोई खुशी नहीं है क्योंकि उसने अपने प्यार की गद्दारी की। भारतीय साहित्यिक आलोचना के सिद्धांतों से परिचित हिंदुस्तानी अध्यापक इस सवाल के अलग जवाब देते हैं। उनके विचार में पलाश के फूलों का लाल रंग - यह शोषित पीड़ित लोगों की आंखों में क्रोध का रंग है, क्रांति के फहराते हुए लाल झंडों का रंग है। अब विद्यार्थी सोच रहे हैं कि लेखक को चिट्ठी लिखके पूछेंगे किसका विचार सही है।

तीसरे और चौथे साल के छात्र ललित साहित्य ही नहीं, भारत की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं से संबंधित विभिन्न अखबारों और पत्रिकाओं में छपे लेख भी पढ़ते हैं और पढ़कर ताजी खबरों और आधुनिकतम सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं पर बहस छेड़ते हैं। जो शब्द अखबारों, पत्रिकाओं और टी.वी. के समाचारों में मिलता हैं वही शब्द वे बातचीत में प्रयोग करते हैं। उदाहरण के तौर पर अगर किसी छात्र को लेख पढ़ते समय मुद्रास्फीति जैसा शब्द मिला तो हिंदुसतानी दोस्तों से बातें करते समय inflation के लिये वही शब्द इस्तेमाल करता है। फिर कुछ दोस्त बोलते हैं : वाह! तुम्हारी हिंदी कितनी अच्छी है! कितनी शुद्ध है! और बेचारा छात्र एकदम समझता है कि इस तारीफ में व्यंग्य है। दूसरा हिंदुस्तानी दोस्त सीधे बोलेगा: तुम्हारी हिंदी किताबी है। हम लोग ऐसा नहीं बोलते।

नाराज़ विद्यार्थी अध्यापकों के पास आकर पूछते हैं: आप ने हम को क्यों ऐसी हिंदी सिखायी जिस को सुनकर लोग हंसते हैं? वैसे छात्र पहले से जानते हैं कि भारतीय भाषाओं में diglossia का मतलब क्या है। हम शुरू से ही उनको समझाते हैं कि जो भाषा टी.वी. के समाचारों में प्रयोग की जाती है और जो भाषा आम लोग उसी विषय पर बात करते हुए इस्तेमाल करते हैं उन दो भाषाओं में जमीन आसमान का फर्क है। लेकिन एक बात कुछ सैद्धांतिक रूप से जानना और दूसरी बात प्रयोग करना। हम रूसियों के लिये diglossic situation के आदी होना इस लिये कठिन है कि रूसी भाषा में अगर कोई पारिभाषिक शब्द प्रयोग किया जाता है तो हर हालत में उसी शब्द का प्रयोग किया जाएगा। उदाहरण के लिये अगर *अनुसूचित जातियां और जनजातियां* जैसा पारिभाषिक शब्द भाषा में मौजूद है तो वह हर परिस्थिति में उपयोग किया जाएगा, चाहे विश्वविद्यालय के व्याख्यान में हो या दोस्तों की पार्टी में हो।

diglossic situation में परिस्थितियों के अनुकूल ठीक जबान चुनने के लिये हम अभ्यास कराने की कोशिशें कर रहे हैं। उदाहरण के तौर पर विद्यार्थी को कोई आर्थिक या सामाजिक विषय दिया जाता है जिस पर पहले वैज्ञानिक कांफ्रेंस में पेपर पढ़ना चाहिये और इसके बाद अपने दोस्तों से चाय पीते हुए उसी विषय पर बातें करना चाहिये। ऐसे अभ्यास विद्यार्थियों को दिलचस्प लगते हैं लेकिन उनका ज़्यादा फायदा है या नुकसान - यह विवादग्रस्त प्रश्न है। हिंदुस्तानी अध्यापक ऐसे अभ्यासों के विरुद्ध हैं। उनका ख्याल है कि शुद्ध हिंदी ही सिखानी-सीखनी चाहिये। शायद उन के तर्कों में विवेक का अंश है।

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं पर अनौपचारिक बातचीत में जिस किस्म की भाषा इस्तेमाल की जाती है विद्यार्थियों के लिये तो क्या, अध्यापकों के लिये भी इसकी नकल करना मुश्किल है। इस लिये विद्यार्थी अनौपचारिक बातचीत करने की कोशिश करते समय विशेषणों और सहायक क्रियाओं को छोडकर बाकी सारे अंग्रेजी शब्द इस्तेमाल करते हैं। ऐसी टूटी-फूटी ज़बान का अभ्यास करने से सिर्फ़ नुकसान पहुंच सकता है - हिंदुस्तानी अध्यापकों की यह बात मानकर हमने फैसला किया कि भविष्य में गम्भीर विषयों पर अनौपचारिक बातचीत करने के अभ्यास न्यूनतम मात्रा में करेंगे ओर विद्यार्थियों की भाषा किताबी न रहने देने के लिये दूसरे तरीके ढूढने की कोशिश करेंगे।

विद्यार्थी खुद भी क्लास के बाहर सही बोलचाल की भाषा सीखने के प्रयत्न कर रहे हैं। आज-कल इस के बहुत मौके मिलते हैं। भारतीय मित्रों से मिलके बात करो, फिल्में देखो, इन्टर्नेट में हर किस्म की सूचना पढ़ो आदि। सिर्फ एक चीज़ की कमी है - हिंदी सीखके अपना ज्ञान इस्तेमाल करने के मौके सीमित हैं। इस लिये विद्यार्थी और उनके अध्यापक ये सपने देखा करते हैं कि भारत में हिंदी के बिना कोई काम न चले और रूसी विद्यार्थियों को हर क्षेत्र में हिंदी का उपयोग करने का मौका मिले।

हिन्दी के अध्ययन की विधियाँ – शब्दावली और शब्दरचना

येकातेरीना पानिना, मॉस्को, रूस

लोमोनोसोव मॉस्को विश्वविद्यालय में हिन्दी के अध्ययन का इतिहास बहुत लंबा है। विश्वविद्यालय में पूर्वीय भाषाओं के अनुवादकों की तैयारी की जाती है। परन्तु हमारे संस्थान के अलावा विश्वविद्यालय के भाषाविज्ञान विभाग में भी हिन्दी का अध्ययन किया जा रहा है। तुलनात्मक भाषाविज्ञान के विशिष्ठकरण की मर्यादाओं के भीतर। आज मैं हिन्दी की विधियों और सिखाने की कई समस्याओं के विषय पर बात करना चाहती हूँ।

सीखने के पहले साल के दौरान विद्यार्थी वर्णमाला, देवनागरी लिपि और व्याकरण के प्राथमिक भाग से परिचित हो जाते हैं। इसमें हैं – वर्तमानकाल, भूतकाल और भविष्यकाल, परसर्ग, क्रियाविशेषण कृदंत, कर्मवाच्य इत्यादि। पहला साल पूरा करने पर विद्यार्थी दैनिक जीवन के विषय पर चर्चा कर सकते हैं – घर-परिवार, शौक, यात्रा के बारे में विचार विमर्श कर सकते हैं, उन्हें भारतीय संस्कृति की कुछ जानकारी भी मिल जाती है। व्याकरण के पाठ्यक्रम के साथ-साथ वे हिन्दीभाषी कवि और अनुवादक के द्वारा पढ़ाया जाता है।

दूसरे साल के दौरान व्याकरण का अध्ययन जारी रहता है लेकिन साथ ही विद्यार्थी हिन्दी के दूसरे प्रकार के साहित्य (जासूसी कहानी) पढ़ना और हिन्दी फ़िल्में देखना शुरु करते हैं। मैं बता दूँ कि शैक्षिक पाठ के रूप में जासूसी कहानी क्यों चुनी गयी?

सरल मनोरंजक कथावस्तु, पात्रों की भावपूर्णता, उन शब्दों की बड़ी संख्या जिनका प्रयोग दैनिक जीवन में किया जाता है इस प्रकार के साहित्य की विशिष्ठता है जिसके कारण विद्यार्थियों को ऊबने का मौका नहीं मिलता। काम तो इस तरह चलता है – पाठ के एक हिस्से को पढ़ने और अनुवाद करने के पश्चात् उन शब्दों के नीचे लकीर खींची जाती है जिनको याद करने की ज़रूरत है। उपकथा के विचार विनिमय करने के बाद रूसी से हिन्दी में उन वाक्यों का अनुवाद किया जाता है जिनमें नये शब्द शामिल हैं। शब्दीय श्रुतिलेख, पर्याय सीखने से संबंधित काम अभ्यास का अखंड अंग है। पाठ के पढ़े हुए भागों का वापस अनुवाद भी करना ज़रूरी है – इन विद्यार्थियों को विशेष मुहावरे और शब्दों के संदर्भ का उपयोग कंठस्थ करके याद करने में मदद करता है।

फ़िल्म के समान कार्य शब्दों और उनके स्वनन के रूपों को पहचानने में मदद करता है जो रूसीभाषियों के लिये एक विकट समस्या है। प्रारंभिक अवधि में बोलचाल की भाषा का सामना करके विद्यार्थी अक्सर उधेड़ बुन में पड़ जाते हैं क्योंकि शब्दों की झड़ी को विभाजित नहीं कर पाते। “वह आ रहा है”, “मैं कर रही हूँ” जैसे सामान्य वाक्य भी उनके लिए अलंघनीय बाधा लगती है। फ़िल्म को सुनकर और दोहराकर विद्यार्थी वाक्यों को लिखकर इन्हें ज्ञान की परीक्षा के लिए तैयार करते हैं। शुरू में अध्यापक को सुनने से पहले ही उन्हें नये शब्द समझाये जाते हैं जिससे कुछ समय बाद वे स्वयं अपने काम को करने में सक्षम हो जाते हैं। नया शब्द सुनकर वे खुद उसे शब्दकोश में ढूढ़ने की कोशिश करते हैं। उनके लिए कोई भी शब्द अस्पष्ट नहीं रहता।

यह सब विद्यार्थियों को शुद्ध व्याकरण से, भाषा की ऊँची शैली से ही नहीं बल्कि जीवित बोलचाल की भाषा से भी अवगत कराता है। मगर फ़िल्मों का चुनाव करते समय खासकर यही ध्यान में रखने की ज़रूरत है कि फ़िल्म में किस तरह की शब्दावली प्रयुक्त है। आदर्श के रूप में अँग्रेज़ी शब्दों से भरी फ़िल्मों का मेल बैठाना बड़ा अच्छा

होता। ऐतिहासिक फ़िल्में हमें इतिहास का ज्ञान कराती हैं जबकि अन्य फ़िल्में हमें केन्द्रीय प्रदेशों और विशाल नगरों में भाषा की आधुनिक स्थिति की जानकारी देती हैं।

हिन्दी पढ़ते समय सीखे हुए शब्दों के सिलसिले में शब्दरचना से अधिक गहरा परिचय कराने के बारे में बोलने की ज़रूरत है। बात यह है कि पढ़ाई के दौरान इस तरह के प्रश्न उत्पन्न हो जाते हैं कि फलाने शब्द के क्या रूपग्राम होते हैं या ये उत्पादक प्रत्यय हैं कि नहीं, वे हिन्दी शब्दावली के किस भाग में सम्मिलित होते हैं – संस्कृत, अरबी, फ़ारसी, उनके संयोजन की क्या योग्यता है। यह बात टालने की कोई संभावना नहीं है। उल्टे, इस विषय का अध्ययन बहुत लाभदायक होता है। उपसर्गों, परप्रत्ययों, समस्त शब्दों से परिचय करके विद्यार्थी विभिन्न शब्दरचना की विधियों की सहायता से नये शब्द बनाकर अभ्यास करते रहते हैं।

अगर ज़रूरत पड़ती है तो धातु या परप्रत्यय के निश्चित अर्थ की जानकारी देकर यह उनको ऐसा सही शब्द बनाने का अवसर देता है जिसे वे पहले अनभिज्ञ थे। संस्कृत उपसर्गों को मालूम करके वे शब्दकोश के बिना उपसर्गीय शब्द का अनुवाद कर पाते हैं। इस तरह एक ओर से इस विषय में दूर तक जाने की आवश्यकता विद्यार्थी स्वयं निकल लेते हैं और दूसरी और से यह भाषा की सारांश से निकल आती है।

इसी संबंध में विद्यार्थियों के संस्कृत सीखने के लाभ के विषय पर कुछ कहा जा सकता है। हम उन छात्रों के बारे में बात करते हैं जो भाषाविज्ञान या साहित्यविज्ञान के क्षेत्र में ही नहीं इतिहास और अर्थशास्त्र के क्षेत्र में भी विशेष प्रशिक्षण पाते हैं। संस्कृत संधि के नियमों, समस्त शब्दों के प्रकार, शब्दरचना की विधियों, पर्याय और बोली की विभिन्न शैलियों में विभेदन करने का ज्ञान देती है। विद्यार्थी को मालूम हो जाता है कि संस्कृत शब्द का प्रयोग किस संदर्भ में उचित होगा। यह भी हो सकता है कि संस्कृत शब्द के बदले अँग्रेज़ी, अरबी या फ़ारसी शब्द का इस्तेमाल करना ज़्यादा अच्छा रहेगा।

शब्दरचना की तरह अकर्मक क्रिया से सकर्मक क्रिया बनाने की विधि पर ध्यान देना चाहिए। इस विषय से प्रारंभिक अवधि के पाठ्यक्रम में ही अवगत करना पहले से मान लिये जाने के बावजूद यह देखा जा सकता है कि उसे शुरू में ही, दूसरे विषयों से पहले अध्ययन में प्रचलित करना पड़ता है। और फिर से इसका कारण है – विद्यार्थियों की फौरी ज़रूरत। वे शीघ्र ही जानना चाहते हैं कि अकर्मक क्रिया से सकर्मक क्रिया कैसे बनायी जाती है और दूसरे तरह की क्रियाओं को बनाने के क्या तरीके होते हैं।

शब्दरचना से परिचय की मर्यादाओं के भीतर एक और अलग विषय है – संस्कृत के नये शब्द जो संस्कृत के रूपग्रामों और संस्कृत की शब्दरचना के नियमों पर आधारित हैं लेकिन संस्कृत में शामिल नहीं होते। तो विद्यार्थी क्या करें ? वे उन शब्दों का इस्तेमाल करें जो दूसरे लफ़्ज़ों के मुकाबले कदाचित होते हैं और जो हर किसी स्थिति में प्रयुक्त नहीं हो सकते या अनुकूल अँग्रेज़ी शब्द जो पाठ की शैली पर अपना प्रभाव ज़रूर डालेंगे ? क्या इन कठिन शब्दों को सीखने के लिए समय व्यतीत करना उचित है जब ऐसे शब्द बहुत कम दैनिक जीवन में आते हैं ?

फिर भी यह ज़रूरी है कि इस तरह के शब्दों से विद्यार्थियों को परिचित होना ही चाहिए।

हम एक और समस्या का ज़िक्र करेंगे – पाठ्यपुस्तकों की। आजकल अध्यापन न केवल फ़िल्मों, अखबारों और साहित्यिक कृतियों के आधार पर बल्कि अँग्रेज़ी में लिखी हुई हिन्दी की पाठ्यपुस्तक के आधार पर किया जा रहा है। इसका नाम है – "टीच योरसेल्फ़ हिन्दी"। इस किताब के गुणों के विषय पर ज़्यादा बताया जा सकता है लेकिन वास्तविकता यह है कि अभी तक रूसी भाषा में इस पुस्तक के समान इतनी अच्छी कोई दूसरी किताब नहीं है। जो पाठ्यपुस्तकें रूसी में लिखी जा रही हैं उनमें अधिकतर न दिलचस्प पाठ न ज़रूरी शब्दावली सम्मिलित हैं।

अक्सर वहाँ के पाठ बहुत जटिल या उबाऊ होते हैं और अप्रचलित शब्दावली के साथ। यह समस्या न सिर्फ़ विश्वविद्यालयों की है परन्तु उस स्कूल की भी है जहाँ बच्चों को विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी पढ़ाई जाती है। इसलिए मौजूदा हालत में समस्या तो स्पष्ट है – हमें इस तरह की पाठ्यपुस्तक लिखनी है जिसको निम्नलिखित माँगों के अनुकूल होना चाहिए। वे हैं –

1. संवादों और पाठों में रोचक कथावस्तु। वाँछनीय है अगर राष्ट्रीय मौलिकता भी इसमें शामिल हो,
2. सांस्कृतिक विषय पर आधारित पाठ जो भारत की संस्कृति और परंपराओं से परिचय के लिए आवश्यक है,
3. रूसी से हिन्दी में अनुवाद करने के लिए अभ्यासों की बड़ी संख्या,
4. विद्यार्थियों की ज़रूरतों से संबंधित व्याकरणिक टिप्पणी,
5. हर एक पाठ की न्यूनतम शब्दावली,
6. बोलने के लिए ऐसे विषय जिनकी सहायता से विद्यार्थी स्वतंत्र रूप से काम कर सकें।

हमें आशा है कि इस प्रकार की पाठ्यपुस्तक हमारे हाथ जल्द ही लगेगी।

हिंदी शिक्षण एवं प्रशिक्षण में समस्याएँ- चुनौतियाँ एवं समाधान

डॉ. वंदना मुकेश

हिंदी विश्व में सर्वाधिक बोली जानेवाली भाषाओं में से एक है। संसार में लगभग 400 करोड़ लोग हिंदी बोलते हैं और लगभग 800 करोड़ लोग हिंदी समझ सकते हैं। विश्व के अनेक देशों में सैकड़ों छोटे-बड़े केंद्रों एवं लगभग 150 विश्वविद्यालयों में प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालयीन शोध स्तर तक हिंदी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है। विदेशों से 25 से अधिक पत्र-पत्रिकाएँ लगभग नियमित रूप से हिंदी में प्रकाशित हो रही हैं। कई देशों से रेडियो पर हिंदी कार्यक्रमों का प्रसारण किया जा रहा है।

किंतु फिर भी हिंदी शिक्षण एवं प्रशिक्षण का मार्ग प्रश्नों और अनेक चुनौतियों से भरा है। इस प्रपत्र में इंग्लैंड में हिंदी के शिक्षण और उससे जुड़ी समस्याओं पर एक विहंगम दृष्टि से अवलोकन करते हुए समाधानों पर विचार किया जायेगा। संभव है कि विश्व- स्तर पर हिंदी शिक्षकों द्वारा इन समस्याओं को अनुभूत किया जा रहा हो।

इंग्लैंड में हिंदू मंदिरों की भूमिका हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है ऐसा कहा जा सकता है कि मंदिर भाषा के प्रचार-प्रसार का प्रमुख केंद्र हैं। यह वह स्थान है जहाँ अक्सर भारतीयता और भक्ति-भावना से ओत-प्रोत भारतीय इकट्ठा होते है। इंग्लैंड में अनेक मंदिरों में हिंदी भाषा की शिक्षा दी जाती है। लंदन के अनेक मंदिरों के अतिरिक्त, बरमिंघम में श्री गीता भवन, दुर्गा मंदिर, वोलेवरहैंप्टन में श्रीराम मंदिर, श्रीकृष्ण मंदिर, नौटिंघम में कला निकेतन आदि अनेक मंदिरों में हिंदी भाषा की साप्ताहिक कक्षाएँ नियमित रूप से चल रही हैं। कार्डिफ़, बेलफ़ास्ट, आदि अनेक नगरों में धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं के द्वारा हिंदी शिक्षण की सुविधा उपलब्ध करवाई जा रही है। अनेक स्वयंसेवी शिक्षक व्यक्तिगत स्तर पर भी हिंदी शिक्षण का कार्य कर रहे हैं। वे प्रयत्नपूर्वक अपने बच्चों को घरों में हिंदी पढ़ा रहे हैं।

हिंदी की लोकप्रियता बढ़ाने और शिक्षण में हिंदी फिल्मों का योगदान विलक्षण है। विदेशों में बसा भारतीय समाज हिंदी फिल्मों का दीवाना है। सिनेमा हॉल के बाहर विभिन्न भाषा-भाषी सच्चे अर्थों में भारतीयता का संवहन करते हैं। किंतु दुख की बात यह है कि भारतीय फ़िल्म उद्योग-बॉलीवुड की फ़िल्मों में अब हिंदी कम अंग्रेज़ी ज़्यादा, या यों कहें कि हिंदी - अंग्रेज़ी का मिले-जुले स्वरूप; हिंग्लिश का प्रयोग अधिक हो रहा है। किंतु आज विदेशों में दूसरी और तीसरी पीढ़ी के भारतीयों एवं पाकिस्तानियों के बीच हिंदी फ़िल्में बहुत लोकप्रिय हैं। विभिन्न भारतीय टी।वी चेनलों ने भी हिंदी की लोकप्रियता में वृद्धि की है। इस प्रकार दृश्य एवं श्रव्य माध्यम हिंदी (हिंग्लिश) शिक्षण कर रहा है।

कैम्ब्रिज, ऑक्सफ़र्ड एवं लंदन यूनिवर्सिटी द्वारा स्नातक स्तर पर भारतीय संस्कृति विभाग के अंतर्गत हिंदी का एक ऐच्छिक विषय के रूप में अध्यापन किया जा रहा है।

कोई भी भाषा पढ़ाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। देश में हो या विदेश में, यह चुनौती तब दोगुनी हो जाती है जब उस भाषा के सीखने पर उसे व्यवहार में लाने के अवसर न के बराबर हों। हम सभी जानते हैं कि भाषा मात्र संवाद या संप्रेषण का माध्यम नहीं अपितु भाषा उस समाज की, उस संस्कृति की संवाहक होती है जिसमें उसका व्यवहार होता है।अत: परिवेश से कट कर भाषा शिक्षण निश्चित ही एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।सबसे पहले तो यह देखना होगा कि वे कौन लोग हैं जो हिंदी भाषा का अध्ययन करना चाहते हैं।

मोटे तौर पर हिंदी के अध्येताओं को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1-बच्चे 2-वयस्क

इन्हें भी दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1) वे लोग, जिनकी मातृभाषा अथवा प्रथम भाषा हिंदी नहीं हैं और वे हिंदी एक नयी भाषा के रूप में सीखना चाहते हैं

2) वे लोग जिनकी मातृभाषा तो हिंदी है लेकिन प्रथम भाषा नहीं, अत: स्वयं बोल, लिख-पढ़ नहीं सकते, लेकिन थोड़ा बहुत समझ लेते हैं। उदाहरणार्थ- ब्रिटिश भारतीय

इन वर्गों के पुन: तीन उपवर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

- नौकरी के कारण निश्चित कार्यकाल के लिये भारत से विदेशों में आये हिंदी भाषी परिवारों के बच्चे
- विदेशों से भारत में निश्चित कार्यकाल के लिये भेजे जानेवाले कर्मचारी
- व्यक्तिगत रुचि के कारण- इस उपवर्ग को पुन: पाँच उपवर्गों में विभाजित किया जा सकता है-
    1. भाषा सीखने की सहज जिज्ञासा
    2. हिंदी फ़िल्में
    3. भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रति आकर्षण
    4. विश्वविद्यालयीन स्तर पर ऐच्छिक विषय के रूप में हिंदी का अध्ययन
    5. पर्यटन के लिये हिंदी

समस्याएँ जितनी विविधता और विस्तार हिंदी के अध्येताओं की है, हिंदी- शिक्षण की समस्याएँ भी उतनी ही अधिक हैं। कुछ पर दृष्टिपात किया जा सकता है-

1) उचित और मानक पाठ्यक्रम का अभाव-

एक मानक पाठ्यक्रम के अभाव में हिंदी का शिक्षण किसी योजनाबद्ध रूप में नहीं हो पाता। उचित मार्गदर्शन के अभाव में शिक्षक हिंदी के अपने ज्ञान और समझ के अनुरूप कामचलाऊ पाठ्यक्रम के आधार पर हिंदी अध्यापन का कार्य करते हैं। इस विषय में प्रोफेसर महावीर सरन जैन का कहना है कि हिन्दी शिक्षण के पाठ्यक्रम का निर्माण प्रत्येक देश के शिक्षण स्तर एवं हिन्दी प्रशिक्षण के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को ध्यान में रखकर करना चाहिए। पाठ्यक्रम इतना व्यापक एवं स्पष्ट होना चाहिए जिससे शिक्षक एवं अध्येता का मार्गदर्शन हो सके।

2) हिन्दी के मानक रूप का अभाव

यह एक ऐसी समस्या है जिसका निवारण उचित प्रशिक्षण के द्वारा ही किया जा सकता है। उच्चारण, वर्तनी, लेखन, रूप-रचना, वाक्य-गठन और अर्थ आदि के स्तर पर अनेक तरह के प्रयोग मिलते हैं।

हालाँकि सूचना प्रौद्योगिकी एवं यूनिकोड के आगमन से इस समस्या का कुछ हल तो निकला है। लेकिन इस दिशा में अभी बहुत काम होना बाकी है।

3) प्रशिक्षित शिक्षकों को अभाव

प्रत्येक भाषा का अपना विशिष्ट स्वरूप, व्याकरण, ध्वनियाँ इत्यादि होती हैं, एक शिक्षक को उस भाषा विशेष के इन पक्षों का ज्ञान होना आवश्यक है। अंग्रेज़ी भाषा पढ़ाने के लिये CELTA, TESOL का प्रशिक्षण अनिवार्य है। जबकि हिंदी भाषा पढ़ाने के लिये किसी प्रशिक्षण की आवश्यकता ही नहीं समझी जाती। हिंदी भाषा को बोलने-समझनेवाले लोग अपने हिंदी प्रेम के कारण हिंदी शिक्षण का कार्य कर रहे हैं और प्रशिक्षण का प्रश्न उठाना व्यक्तिगत आक्षेप के रूप में भी लिया जा सकता है। अत: आवश्यक है कि विदेशों में हिन्दी शिक्षण करने वाले शिक्षकों के लिए शिक्षण-प्रशिक्षण एवं नवीकरण पाठ्यक्रमों का आयोजन एवं संचालन होना चाहिए ।

यहाँ यह उल्लेख करना उचित होगा कि, यॉर्क विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्री महेंद्र किशोर वर्मा, श्रीमती उषा वर्मा एवं श्री अमरीक कलसी के द्वारा नौवें दशक के उत्तरार्द्ध में भारतीय भाषा-शिक्षण हेतु एक प्रशिक्षण शिविर आरंभ किया। पाँच भारतीय भाषाओं के शिक्षण के लिये यह चार दिवसीय ईस्टर प्रशिक्षण शिविर लगभग 10 वर्षों तक निरंतर चलता रहा। इसके अंतर्गत शिक्षकों को हिंदी, उर्दू, पंजाबी, गुजराती एवं बंगाली भाषाएँ सिखाने के लिये प्रशिक्षित किया गया। यह वे भाषाएँ थीं जिन्हें राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के अंतर्गत सम्मिलित किया गया था। इस शिविर में मातृभाषा प्रशिक्षण हेतु शिक्षण-सामग्री तैयार करना भी सिखाया गया। उसी दौरान नॉटिंघम में हिंदी प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया। इन प्रशिक्षण शिविरों के माध्यम से ब्रिटेन में भारतीय भाषाएँ पढ़ानेवाले अनेक शिक्षक लाभान्वित हुए। आज फिर इस बात की गहन आवश्यकता महसूस की जा रही है कि कोई हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण कार्यक्रम या शिविर आयोजित किये जाएँ।

4) उचित संसाधनों का अभाव एवं स्वाध्याय के लिये उचित पुस्तकों का अभाव-किसी भी भाषा से अधिकाधिक परिचित होने के लिये आवश्यक है कि उस भाषा में प्रत्येक पाठक के लिये साहित्य पढ़ने के अवसर प्राप्त हों, उचित पाठ्य-पुस्तकें, स्वाध्याय के लिये पुस्तकें आदि उपलब्ध हों। प्राथमिक स्तर की कुछ पाठ्य-पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं, जिनमें रुपर्ट स्नेल की टीच योरसेल्फ़ हिंदी, वेदप्रकाश मोहला की पुस्तकें, नागरा की बिगिनर्स हिंदी इत्यादि हैं और इनका उपयोग शिक्षकों द्वारा ऐच्छिक रूप से किया जाता है। संभव है कि बहुत से शिक्षकों को इन पुस्तकों के विषय में ज्ञात नहीं हैं अथवा वे भारत में पढ़ाई जानेवाली पाठ्य पुस्तकों का ही आधार लेते हैं। जो यहाँ के वातावरण के लिये उचित नहीं है।

5) व्याकरण -किसी भी भाषा-अध्ययन के लिये उस भाषा के विविध अवयवों का ज्ञान, उनका विवेचन-विश्लेषण करते हुए उनके प्रयोग के नियमों को आत्मसात करना बहुत आवश्यक है। भाषा को शुद्ध रूप से बोलना, पढ़ना और शुद्ध लिखने का ज्ञान ही व्याकरण है वर्ण, शब्द एवं वाक्य भाषा के महत्त्वपूर्ण भाग हैं। हिंदी-शिक्षकों में व्याकरण का अपर्याप्त ज्ञान भाषा शिक्षण-प्रशिक्षण में अवरोध उत्पन्न करता है। विशिष्ट ध्वनियों का उच्चारण-प्रशिक्षण भी एक महत्त्वपूर्ण भाग है जो निरंतर अभ्यास से ही अर्जित की जा सकता है।

6) भाषा के अभ्यास के लिये उचित वातावरण का उपलब्ध न हो पाना-किसी भाषा विशेष का व्यवहार एक विशिष्ट समाज में होता है। जब भाषा के व्यवहार के लिये उचित वातावरण का अभाव हो तो हिंदी क्या कोई भी भाषा सीखना बहुत कठिन हो जाता है। यहाँ माता-पिता भी अपने दायित्त्व का ठीक निर्वाह नहीं कर रहे हैं। स्वार्थ और सुविधा के कारण अधिकांश माता-पिता इस दिशा में कोई प्रयास नहीं करते।

7) शिक्षकों और विद्यार्थियों को उचित बढ़ावा न मिलना- यदि हम अपनी भाषा- संस्कृति जीवित रखना चाहते हैं तो प्रयास तो हमें स्वयं ही करना होगा। भारत सरकार को हिंदी के प्रचार- प्रसार करनेवाले शिक्षकों एवं अध्येताओं को ऐसे पुरस्कार-प्रोत्साहन देना चाहिये कि उससे अधिकाधिक लोग हिंदी भाषा सीखने के लिये प्रेरित हों।

8) ग़रीब की भाषा हिंदी, हिंदी के प्रति असम्मान की भावना-

अत्यंत क्षोभ और दुख के साथ कहना पड़ता है कि भारत में आज भी हिंदी गरीब और दीन की भाषा है। आज भी हम मानसिक गुलाम हैं। आज भी अंग्रेज़ी की चमक से हमारी आँखे चौंधिया जाती हैं। कहीं न कहीं यह ग्रंथि है कि अंग्रेज़ी रौब की भाषा है, किसी पर प्रभाव डालना हो या आतंकित करना हो तो अंग्रेज़ी में बोलो। माँ-बाप इस बात में गर्व का अनुभव करते हैं कि मेरा बच्चा अंग्रेज़ों जैसी अंग्रेज़ी बोलता है लेकिन उन्हें यह कहने में बिल्कुल शर्म महसूस नहीं होती कि मेरा बच्चा अपनी मातृभाषा नहीं बोल पाता। जिन अंग्रेज़ों से हम इतने प्रभावित हैं उनसे यह तो सीख पाते कि प्राथमिक शिक्षण मातृभाषा में हो फिर दूसरी भाषा का शिक्षण हो । इंग्लैंड में फ्रेंच, जर्मन या स्पेनिश का शिक्षण पाँचवीं-छटवीं कक्षा के बाद आरंभ होता है। काश भारत में भी ऐसा ही होता। भारत की भाषायी विविधता एवं समृद्धि विलक्षण है। इसके बावज़ूद यदि हम अपनी भाषाओं का सम्मान करने में असमर्थ हैं तो इसके लिये भारत सरकार की दोषपूर्ण नीतियाँ हैं। भारत संसार का एकमात्र देश है जिसके पास अभिव्यक्ति के लिये स्वभाषा भी नहीं है। जब तक हम अपनी भाषा का सम्मान नहीं करेंगे कोई और कैसे करेगा? समस्या की जड़ तो भारत में ही है। वर्तमान में हिंदी बोले जाने के आधार पर विश्व की प्रथम तीन भाषाओं में हिंदी आती है लेकिन वर्तमान ह्रास को देखते हुए वह दिन दूर नहीं जब विश्व की विलुप्त भाषाओं में हिंदी का नाम भी होगा।

समाधान

समाधानों की पड़ताल करते हुए संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि-

1. सर्वप्रथम, माता-पिता स्वयं हिंदी में बातचीत करें और बच्चों को हिंदी बोलने, पढ़ने और लिखने के लिये प्रेरित करें।
2. भारत और विदेशों में भारतीयों के बीच में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का व्यवहार हो।
3. भारत में प्राथमिक शिक्षण मातृभाषा में हो और हिंदी अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ायी जाए।
4. विज्ञान एवं तकनीकी की जानकारी हिंदी में सर्वसुलभ हो एवं हिंदी में रोजगार के अवसर प्रदान किये जाएँ।
5. विदेशों में साप्ताहिक, मासिक सामाजिक कार्यक्रमों, तीज त्यौहारों का विशेष रूप से आयोजन किये जाएँ ।
6. विदेशों में हिंदी का एक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम विकसित किया जाये। जिसमें यहाँ के शिक्षक भारतीय विद्वानों के मार्गदर्शन में पाठ्य पुस्तकें बना सकें,जिसमें यहाँ का परिवेश समाविष्ट हो।
7. अंग्रेज़ी की आई.एल.टी.एस. एवं टोफेल की परीक्षाओं की तरह भारत में नौकरी, प्रशिक्षण के लिये जानेवाले विदेशियों/प्रवासियों के लिये हिंदी भाषा ज्ञान की योग्यता परीक्षा अनिवार्य करनी चाहिये।
8. विदेशों में राष्ट्रीय पाठ्यक्रम में हिंदी का द्वितीय भाषा के रूप में अध्ययन- अध्यापन होना चाहिये।

   यहाँ यह उल्लेखनीय है कि हाल ही में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के अंतर्राष्ट्रीय परीक्षा विभाग ने इंग्लैंड के सेकेंड्री स्कूलों में आई.जी.सी.एस.ई. की हिंदी परीक्षा को सम्मिलित किया है। जिसके माध्यम से हिंदी अध्येताओं को द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी चयन करने की सुविधा प्रदान की गई है।
9. शिक्षकों के लिये हिंदी प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिये। समय- समय पर हिंदी प्रशिक्षण- नवीकरण कार्यक्रमों और शिविरों का आयोजन किया जाना चाहिये।
10. हिंदी-शिक्षकों को केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा प्रकाशित पुस्तिका-देवनागरी लिपि तथा हिंदी वर्तनी का मानकीकरण-का वितरण किया जाए।
11. श्रवण, वार्तालाप, वाचन, एवं लेखन कौशल के विकास के लिये विशेष अवसर प्रदान किये जाएँ।
12. विदेशों में वयस्क शिक्षा पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाए - जिसके अंतर्गत दैनिक जीवन के विविध प्रयोजनों की सिद्धि के लिए हिन्दी भाषा की आधारभूत शब्दावली का निर्माण एवं आधारभूत व्याकरण के अनुप्रयोगात्मक पाठों का समावेश किया जाए।

13. भारत सरकार के विदेशों में हिंदी-शिक्षकों और विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने हेतु पुरस्कार एवं उचित मानधन की व्यवस्था करनी चाहिये।
14. हिंदी-शिक्षकों के त्रैमासिक, अर्द्ध-वार्षिक या वार्षिक सम्मेलन हो जिसमें हिंदी प्रशिक्षण कार्यशाला आयोजित हों एवं शिक्षकों के हिंदी के शिक्षाविदों से संवाद- परिसंवाद के अवसर प्रदान किये जाएँ।
15. कैम्ब्रिज अथवा किसी विदेशी नाम के स्थान पर परीक्षाओं को भारतीय विश्वविद्यालय जैसे केंद्रीय हिंदी संस्थान आगरा अथवा महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय मुक्त विद्यापीठ वर्धा द्वारा मान्यता प्रदान की जाए।
16. शिक्षण के समय आनेवाली समस्याओं का निराकरण स्वानुभव के आधार पर कुछ इस तरह किया जा सकता है।
    - विद्यार्थियों के भाषा ज्ञान का प्रारंभिक अवस्था में मूल्यांकन
    - उनकी आवश्यकता के आधार पर पाठ्यक्रम निर्माण
    - चित्रों, दृश्य वस्तुओं का प्रयोग
    - अभिनय का प्रयोग
    - खेल-पारस्परिक संवादात्मक स्थिति एवं अनुभव का निर्माण
    - तकनीकी का प्रयोग- जैसे स्मार्ट बोर्ड

संक्षेप में कहा जा सकता है कि हिंदी भाषा के औपचारिक शिक्षण-प्रशिक्षण के अतिरिक्त व्यक्तिगत स्तर पर किये जानेवाले प्रयास अत्यंत महत्वपूर्ण और हिंदी के पुनरुत्थान में मील का पत्थर सिद्ध होंगे। एक भारतीय होने को नाते हमें हिंदी में बात करने में गर्व की अनुभूति होनी चाहिये। स्वतंत्रता सेनानियों ने देश को स्वतंत्र करवाया अब हम पढ़े-लिखे भारतीयों का दायित्त्व है कि हम स्वयं को मानसिक गुलामी के बंधन से मुक्त करें। अंत में यही कहूँगी कि जिस प्रकार बूँद-बूँद से घड़ा भरता है इसी प्रकार एक-एक व्यक्ति के प्रयास से ही हिंदी अपना खोया सम्मान पा सकती है।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को सूल।।

हिन्दी शिक्षण एवं प्रशिक्षण में समस्याएँ : चुनौतियाँ एवं समाधान

डॉ. श्रीराम परिहार, (डी। लिट। हिन्दी)
प्राचार्य

भाषा संस्कृति की धारक और संवाहक होती है। मनुष्य का जन्म एक सौभाग्य है। प्रकृति ने मनुष्य को अपार संभावनाओं और गुणों के सहित जन्म दिया है। प्रकृति ने मनुष्य को अनेक उपहार स्वभावतः दिये हैं। प्रकृति द्वारा मनुष्य को दिया जाने वाला सबसे सुन्दर और महत्वपूर्ण दाय है - वाणी, वाक्। वाक् या वाणी से भाषा बनी । संकेतों और ध्वनियों की गुफा से मनुष्य बाहर निकलकर आया। उसके अनुभवों और चिन्तन ने शब्दों में उतरना आरंभ किया। मनुष्य ने ध्वनि के लिपि-संकेत बनाये। लिपि बनी। वर्ण और वर्णमाला बनी। शब्द बने। वाक्यों की संरचना हुई। भाषा बनी। साहित्य बना। शास्त्र बना। सभ्यता और संस्कृति के सोपान मनुष्य चढ़ता चला गया। उसके संवादों में भाषा और शब्दों की अर्थवत्ता ने नये-नये क्षितिज खोले। वह भाषा को जन्म के समय से माँ के दूध के साथ पीने लगा। सुनने लगा। सीखने लगा। भाषा में वह रोने लगा। हँसने लगा। उसके सोच, अनुसंधान, स्वप्न, जागृति, अनुभूति और अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा बन गयी। वह मनुष्य की मातृभाषा हो गयी। अक्षर, शब्द और भाषा के प्रकाश में मनुष्य ने अपनी जययात्रा आरंभ की। आचार्य दण्डी का कथन है-

इदमन्धंतमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।
यदि शब्दाहनयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते॥ (काव्यादर्श -१-४)

(यह त्रिभुवन घोर अन्धकार में निमग्न हो जाता, यदि सृष्टि के आरम्भ से शब्द (भाषा) की ज्योति न जलती होती)

आहार, निद्रा, भय, मैथुन ये चारों प्राणी मात्र में होते हैं; लेकिन मनुष्य में विवेक होता है। उसके पास वाणी और भाषा होती है। विवेक और भाषा ही मनुष्य को अन्य प्राणियों से भिन्न और श्रेष्ठ बनाते हैं। साहित्य, ज्ञान, विज्ञान, कला सभी क्षेत्रों में मनुष्य की उन्नति का आधार भाषा है। मनुष्य ने समाज बनाया। समाज की व्यवस्था बनी। व्यवस्था के भीतर स्थित समाज-तंत्र के संचालन के लिए भाषा सर्व-स्वीकृत माध्यम हुई। नीतिशतक रचयिता महाकवि भर्तृहरि कहते हैं- 'अर्थप्रवत्तितत्वनां शब्दा एव निबन्धनम्। (वाक्यपदीय) व्यवहार में प्रवृत्त होने के साधन शब्द ही हैं। जो भी लौकिक व्यवहार होता है, वह भाषा के द्वारा ही होता है। भाषा ने व्यक्तित्व के विकास, व्यक्ति-चेतना के विकास, समाज-निर्माण और उसके सुदृढ़ीकरण, सांस्कृतिक सन्दर्भों के विस्तार, समृद्धि और अभिव्यक्ति में महती भूमिका निभायी है।

हिन्दी की प्रकृति

हिन्दी आर्यभाषा परिवार की भाषा है। भारतवर्ष की सबसे प्राचीन भाषा संस्कृत है। संस्कृत को देववाणी भी कहा जाता है भारतवर्ष के प्राचीनतम - समृद्ध ग्रंथों की रचना संस्कृत में हुई। भाषा निरंतर गतिशील और प्रवाहमयी होती है। उसके रूप-स्वरूप में समयानुसार परिवर्तन होता रहता है। यह परिवर्तन नयी भाषाओं को जन्म देता है। आर्य परिवार की भाषा संस्कृत से ही हिन्दी का जन्म हुआ है। संस्कृत से पालि, पालि से प्राकृत, प्राकृत से अपभ्रंश और अपभ्रंश से हिन्दी का जन्म हुआ है। भारतीय भाषाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अलग-अलग विद्वानों ने अपने-अपने मत प्रकट किये हैं। इस क्षेत्र में डॉ. ग्रियर्सन का नाम शिखर पर है। भाषाओं के गहन अध्ययन के पश्चात आप पहले व्यक्ति बने जिन्होंने भारत की समस्त भाषाओं का वैज्ञानिक ढंग से सर्वेक्षण करके अपनी रिपोर्ट 'लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इंडिया' नामक पुस्तक में प्रस्तुत की।

डॉ. ग्रियर्सन की पुस्तक 'लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इंडिया' के आधार के बाद डॉ. सुनीति कुमार चाटुर्ज्या, डॉ. श्यामसुन्दर दास, डॉ. उदयनारायण तिवारी, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, डॉ. बाबूराम सक्सेना आदि विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से भाषा-विकास पर कार्य करके जो निष्कर्ष प्रस्तुत किये, उन निष्कर्षों के अनुसार वैदिक संस्कृत से हिन्दी तक का विकास-क्रम स्पष्ट होता है। हिन्दी की उत्पत्ति का अपना इतिहास है। हिन्दी की अन्तर - प्रान्तीय बोलियों से बना हिन्दी का अपना बड़ा और समृद्ध कुल-कुटम्ब है। भारतीय भाषाओं की जननी संस्कृत है। समस्त भारतीय भाषाओं की हिन्दी सगी बड़ी बहन है। हिन्दी भारतीय संविधान में राजभाषा के रूप में स्वीकार की गयी है, लेकिन यह राष्ट्रभाषा और विश्वभाषा बनने की अधिकारिणी है।

हिन्दी के पास जनभाषा होने का सांस्कृतिक आधार है। जनाधार और मिट्टी की गंध उसे राष्ट्रभाषा बनने की गुणवत्ता प्रदान करते हैं। राष्ट्र की मिट्टी की गंध उसकी संस्कृति में समाहित होती है। संस्कृति - सभ्यता से संदर्भित संस्कार तथा आचार - व्यवहार में वह प्रयुक्त भी होती है। भारत जैसे महादेश की सांस्कृतिक भाव - सम्पदा को संयत स्वरों में गाने की क्षमता हिन्दी के पास है। हिन्दी की सम्पन्न साहित्य-निधि है। हिन्दी के पास अपना विशाल शब्द - भण्डार है। हिन्दी भाषा के पास लगभग सात लाख शब्द हैं। हिन्दी के पास नये शब्द गढ़ने का कौशल है। इसके पास नये शब्दों को आत्मसात करने की अद्भुत क्षमता है। यह विशेषता और क्षमता भारतीय संस्कृति की भी है। उसमें नये को स्वीकार करने का भाव है। अतः भारतीय संस्कृति और हिन्दी भाषा दोनों ही जीवन्त हैं। जीवनन्तता जनभाषा का वैशिष्ट्य है। जीवन्त भाषा ही जीवन्त संस्कृति को उसके बहुविध स्वरूप संयोजन के साथ जीवन्त अभिव्यक्ति दे सकती है। किसी राष्ट्र का उत्थान और पराभव उसकी संस्कृति के उत्थान-पतन से गहरा जुड़ा होता है। संस्कृति के अवसान का एक कारण उस राष्ट्र की भाषा का अवसान भी होता है। इसलिए निज भाषा की उन्नति संस्कृति की उन्नति तथा राष्ट्र की उन्नति का मूल है। बाबू हरिशचन्द्र की उक्ति है-

निज भाषा उन्नत्ति अहे, सब उन्नत्ति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को शूल॥

हिन्दी का व्यापकत्व

हिन्दी का विकास विश्व स्तर पर हो रहा है। आज पूरे विश्व में लगभग एक अरब से भी अधिक लोग हिन्दी बोलते हैं और हिन्दी में व्यवहार करते हैं। विश्व के लगभग १६२ विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन - अध्यापन हो रहा है। अतः हिन्दी के शिक्षण-प्रशिक्षण की आज अधिक आवश्यकता है। भारत बहुभाषी देश है। हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण की जरूरत भारत और भारत से बाहर ज्ञान-विज्ञान के प्रसार और अनुसंधान की दृष्टि से अधिक अनुभव की जा रही है। हिन्दी की अपनी देवनागरी लिपि है। वर्णमाला है। शब्द-रचना है। वाक्य-रचना है। उसका अपना व्याकरण है। अतः उसका अपना निजी और स्वतंत्र व्यक्तित्व है। वह बोलने में सरल है। वह सुनने में मधुर है। वह सीखने में आसान है। वह जैसी बोली जाती है; वैसी ही लिखी जाती है। उसका अपना एक ध्वनि - विज्ञान है। उसकी अपनी उच्चारण - प्रक्रिया है, जो कण्ठ के अलग-अलग भागों से स्पर्श- सहयोग पाकर पूर्णतः वैज्ञानिक ढंग से स्फुरित होती है।

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर भारतीय भाषाओं और हिन्दी के अन्तरसम्बधों को आलोकित करते हुए कहते हैं- "आधुनिक भारत की संस्कृति एक विकसित शतदल के समान है, जिसका एक-एक दल, एक-एक प्रांतीय भाषा और उसकी साहित्य - संस्कृति है। किसी एक के मिटा देने से उस कमल की शोभा नष्ट हो जाएगी। हम चाहते हैं कि भारत की सब प्रांतीय बोलियाँ, जिनमें सुंदर साहित्य की सृष्टि हुई है, अपने- अपने घर में रानी बनकर रहें। प्रांत के जनगण की हार्दिक चिन्ता की प्रकाशभूमि - स्वरूप कविता की भाषा होकर रहें और आधुनिक भाषाओं के हार में मध्य-मणि हिन्दी भारत-भारती होकर विराजती रहे।" हिन्दी साहित्य और सांस्कृतिक नवजागरण की भाषा रही है। यह मजदूरों-किसानों, संतों-महात्माओं की भाषा रही है। इसने भक्तिकाल में पूरे देश को एकसूत्र में बाँधकर भारत राष्ट्र को भावात्मक और सांस्कृतिक रूप से सुदृढ़ और समृद्ध किया है। यह राजाराम मोहनराय, दयानंद सरस्वती जैसे समाज सुधारकों की भाषा रही है। यह नानक, कबीर, सूर, तुलसी, मीरा, जायसी, की भाषा तो है ही; यह सुभाषचन्द्र बोस की आज़ाद हिन्द फौज की हिन्दुस्तानी हिन्दी थी। महर्षि अरविन्द हिन्दी प्रचार को स्वाधीनता आन्दोलन का हिस्सा मानते थे। महात्मा गाँधी के स्वदेशी आन्दोलन में स्वदेशी वस्तुएँ, स्वभाषा और स्वराज्य प्राप्ति लक्ष्य था।

हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण में समस्याएँ

इतनी सहज, सरल, संस्कृति-संवाहक, राष्ट्र-प्रबोधनी और वर्तमान की चुनौती को स्वीकार करती चलती हिन्दी के शिक्षण-प्रशिक्षण की कुछ समस्याएँ हैं। प्रत्येक भाषा के प्रमुखतः पाँच अवयव होते हैं- १ ध्वनि २ शब्द ३ वाक्य ४ अर्थ और ५ लिपि। ये पाँचों ही हिन्दी को सरलता भी देते हैं लेकिन इनसे जुड़ी समस्याएँ भी हैं। हिन्दी की समस्याओं के आधार में दो रूप हैं - १ कल्पित २ वास्तविक।

१ हिन्दी की सबसे बड़ी समस्या मनोविज्ञान से जुड़ी है। हिन्दी के शिक्षण में संकल्प का अभाव है। कल्पना के माध्यम से मनोवैज्ञानिक तौर पर हिन्दी को कठिन मानकर उसे न सीखने या उसके प्रति उपेक्षा - भाव भी काम करता है। यदि हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण में संकल्प के साथ प्रवृत्त हो, तो हिन्दी क्या, विश्व की कोई भी भाषा सीखी जा सकती है।

२ हिन्दी के मानक रूप का न होना भी समस्या है। भारत के अलग - अलग प्रांतों और क्षेत्रों में हिन्दी के अलग-अलग रूपों का प्रयोग होता है। हिन्दी के सर्वमान्य मानक रूप का अभाव भी देश-विदेश में हिन्दी-शिक्षण में समस्या पैदा करता है।

३ हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण की अन्य समस्या पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण की है। पारिभाषिक शब्दावली के अभाव में वैज्ञानिक अथवा प्रौद्योगिक ज्ञान का विकास और विस्तार संभव नहीं है। यह भी विचारणीय है कि पारिभाषिक शब्दावली भारतीय भाषाओं को आधार बनाकर बनायी जाए कि अंग्रेजी के शब्दों को ज्यों का त्यों ग्रहण कर । इस पारिभाषिक शब्दावली में एकरूपता का न होना भी समस्या है। अपेक्षित गंभीरता और निष्पक्षता की कमी से भी पारिभाषिक शब्दावली का अपेक्षित निर्माण न हो सका है।

४ हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण की एक अन्य समस्या यह है कि हिन्दी का अध्यापन किस कक्षा से प्रारंभ किया जाए? एक ओर भाषा वैज्ञानिक और शिक्षाविद्- नृतृत्वशास्त्री कहते हैं कि बच्चे को प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में ही दी जानी चाहिए। शिशु में अनुकरण की क्षमता प्रबल होती है। ऊँची कक्षा में पहुँचने पर या किशोर अवस्था में पहुँचने पर वह हिन्दी या अन्य भाषा उतनी आसानी से नहीं ग्रहण कर सकता। अतः असमंजस की स्थिति में हिन्दीतर या भारतेतर देशों में हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण किस कक्षा से हो; यह तय कर पाना भी एक समस्या है।

५ हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण में आधारभूत शब्दावली का अभाव भी एक समस्या है। हिन्दी के पास एक सार्वभौमिक शब्दावली अपेक्षित है, जिसके प्रयोग से भारत के प्रान्तों एवं विदेशों में हिन्दी-शिक्षण सरल हो सके।

६ पाठ्य पुस्तकें भाषा और ज्ञान-विज्ञान के प्रशिक्षण का आधार होती हैं। हिन्दी में अलग-अलग प्रांतों एवं विदेशों में शिक्षण के लिए वहाँ के छात्रों के मानसिक स्तर, भाषा की ग्राह्यता और भाषा-हिन्दी के प्रति रुचि को ध्यान में रखकर पाठ्य पुस्तकों का निर्माण होता है। इस क्षेत्र में हिन्दी में उपयुक्त पाठ्य पुस्तकों का निर्माण एवं उचित समय पर प्रकाशन न होना भी समस्या है।

७ प्रत्येक समाज एवं प्रत्येक देश के ध्वनि-स्तर भिन्न होते हैं। ध्वनि के आधार पर भाषा का रूप निर्मित होता है। हिन्दी की विशिष्टता का परिचय उसकी ध्वनियों के द्वारा ही मिलता है। हिन्दी की ध्वनियाँ और उच्चारण-प्रक्रिया अन्य भाषाओं की ध्वनि-प्रक्रियाओं से भिन्न होने के कारण उसके शिक्षण-प्रशिक्षण में समस्या उत्पन्न होती है।

८ भौगोलिक स्थिति की भिन्नता के कारण हिन्दीतर भाषियों के समक्ष शुद्ध उच्चारण की समस्या रहती है। हिन्दी वर्णमाला का ज्ञान अवैज्ञानिक ढंग से दिये जाने के कारण बहुत सी उच्चारण तथा वर्तनी सम्बधी भ्रांतियाँ हो जाया करती हैं। कहीं - कहीं अनुस्वार और अनुनासिक वर्णों की कठिनाई के साथ ही महाप्राण सघोष के शुद्ध उच्चारण में अवरोध भी पैदा होता है। जैसे - 'गधा' के स्थान पर 'गदा' । लेखन सम्बधी अनेक रूपताएँ भी समस्याएँ पैदा करती हैं। इसी प्रकार अशुद्ध उच्चारण के अनुसार लिखने के कारण सीखने वाला भ्रम में पड़ जाता है। चिन्ह-चिह्न, भूक-भूख, झूट-झूठ आदि शब्द उच्चारण की अशुद्धता के कारण लिखते समय भ्रांति पैदा करते हैं।

९ हिन्दी व्याकरण और अन्य भाषाओं के व्याकरण में भिन्नता होने से भी शिक्षण-प्रशिक्षण में समस्या आती है। क्रिया, सर्वनाम, लिंग, वचन आदि के कारण अड़चन होती है। संस्कृत में 'रामः गच्छति' तथा 'सीताः गच्छति' दोनों राम और सीता के साथ क्रिया-रूप एक हैं। अंग्रेजी में भी 'Ram goes' और 'Sita goes' ही होता है लेकिन हिन्दी में 'राम जाता है' और 'सीता जाती है', होता है। संस्कृत में तीन वचन हैं। हिन्दी में दो ही वचन हैं। लिंग निर्धारण कर उसके अनुसार क्रिया प्रयोग भी एक समस्या है। पेट पुल्लिंग है। पीठ स्त्रीलिंग। कान पुल्लिंग है। नाक स्त्रीलिंग। लिंग निर्धारण में- अर्थ, रूप, सादृश्य, साहचर्य का आधार लिया जाता है।

१० हिन्दी शिक्षण -प्रशिक्षण की अन्य समस्या वर्तनी सम्बधी है। हिन्दी की वर्तनी की मुख्य समस्याएँ हैं। तत्सम शब्दों के रूप की समस्या-हलन्त की समस्या-सत्, महत्, दिक्, जगत् आदि। द्वित्व की समस्या-सत्त्व, महत्त्व, वर्द्धमान, अर्द्ध आदि। य-श्रुति की समस्या -जाय-जाए, आइये-आइए, कीजिए-कीजिए। अनुस्वार और चन्द्रबिन्दु की समस्या-अँगना-अंगना, हँस-हंस। विदेशी ध्वनियों के लेखन की समस्या-रेस्तारॉं, सरदी, गरमी, नरम, शरम आदि।

जिस प्रकार भारत में अनेक भाषाएँ हैं, उसी प्रकार लिपियाँ भी अनेक हैं। जहाँ समस्या भाषा को लेकर है, वही समस्या लिपि को लेकर भी है। यदि भाषाओं की अनेकता पारस्परिक बोधगम्यता में बाधक हैं, तो हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण में लिपि की भिन्नता भी एक समस्या है।

हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण में चुनौतियाँ

हिन्दी-शिक्षण प्रशिक्षण के सामने समस्याओं के साथ-साथ चुनौतियाँ भी अनेक हैं। आज के बाजार-युग में भाषा भी वस्तुओं को बेचने का माध्यम के सिवाय कुछ नहीं रह पायी है। बाजार, वस्तुवाद, उपभोक्तावाद, उपयोगितावाद से हिन्दी को खतरा है। हिन्दी के मूल स्वरूप को विकृत किया जा रहा है। हिन्दी शिक्षण को रोजगार से जोड़कर देखा जा रहा है। हिन्दी के सामने कम्प्यूटर भी एक चुनौती बनकर आया है। हिन्दी-शिक्षण की कक्षाओं में छात्रों की संख्या एकदम कम होती जा रही है। अधिकांश विद्यार्थी इंजीनियरिंग, व्यवसायिक और चिकित्सकीय पाठ्यक्रमों में चले जाते हैं। हिन्दी, साहित्य, कला, संस्कृति से जुड़े विषयों को पढ़ने में छात्रों की रुचि तेजी से घटती जा रही है। हिन्दी शिक्षक के सम्मान में भी कमी आयी है। उसे उपेक्षा के भाव से देखा जाता है। हिन्दी के सामने उक्त तथ्य चुनौती बनकर खडे हैं। हिन्दी मात्र विज्ञापन की भाषा बनकर न रह जाए, उसे इस खतरे से बचना है और बाजारवाद की चुनौतियों को स्वीकार करते हुए अपने मौलिक और सांस्कृतिक स्वरूप को बचाए रखना है।

समाधान

हिन्दी शिक्षण - प्रशिक्षण में आने वाली समस्याओं और चुनौतियों के समाधान के कुछ उपाय सुझाव रूप में निम्नलिखित हो सकते हैं-

१ प्रत्येक प्रांत में केन्द्र सरकार एवं प्रांतीय सरकार द्वारा हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था हो। २ विदेशों में हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण कार्य संबंधित देशों की सहमति से भारत सरकार के विदेश मंत्रालय एवं केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा सम्पन्न किया जाए। ३ आधारभूत शब्दावली की रचना केन्द्रीय पारिभाषिक शब्दावली आयोग के माध्यम से हो। ४ हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण संस्थानों

की स्थापना हो, जिसमें सुयोग्य हिन्दी प्रशिक्षक नियुक्त हों। ५ हिन्दी भाषा में भाषणों, गीतों के टेपरिकार्ड तैयार हों। ६ रेडियो- दूरदर्शन पर विशेष हिन्दी कार्यक्रमों का प्रसारण हो। ७ सम्पूर्ण देश की भाषाओं के साहित्य का हिन्दी में अनुवाद हो। ८ तुलनात्मक भाषा अध्ययन के पाठ्यक्रम संचालित किये जाए। ९ द्विभाषी पत्रिकाओं, जिसमें एक भाषा हिन्दी हो, का प्रकाशन-प्रचार किया जाए। १० अध्यापकों के लिए हिन्दी-शिक्षण सम्बधी निर्देश सामग्री तथा विद्यार्थियों के लिए स्वाध्याय रुचिकर सामग्री का प्रकाशन किया जाए। उक्त कार्य समाधान की राह प्रशस्त करने में सहायक हो सकते हैं।

समाधान हेतु वर्तमान में किये जा रहे प्रयास

उपर्युक्त समाधानात्मक सुझावों के आलोक में भारतवर्ष में हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण की दिशा में अनेक प्रयास किये जा रहे हैं।

१ भारत में लगभग ५०० विश्वविद्यालय और लगभग २०००० महाविद्यालय हैं। इन सभी में किसी न किसी रूप में हिन्दी का अध्यापन और शोध कार्य होता है। २ हिन्दी भाषी प्रान्तों में प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा का माध्यम हिन्दी ही है। ३ लगभग १६२ से अधिक विदेशी विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन होता है। ४ महात्मा गाँधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय वर्धा, (भारत) पूर्ण रूप से हिन्दी को समर्पित है, जिसमें हिन्दी से जुड़े अनेक पाठ्यक्रम संचालित किये जा रहे है। ५ अब भारत के मध्यप्रदेश में भी हिन्दी विश्वविद्यालय की स्थापना की घोषणा हो चुकी है। ६ भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त २० से अधिक हिन्दी सेवी संस्थाएँ हिन्दी के प्रचार - प्रसार का कार्य करती हैं। ७ केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, दिल्ली, साहित्य अकादमी दिल्ली, पारिभाषिक शब्दावली आयोग, दिल्ली, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार समिति, चेन्नै एवं धारवाड़ हिन्दी की विभिन्न क्षेत्रों में उन्नति हेतु कार्य कर रही हैं। प्रत्येक प्रांत की राज्य स्तरीय साहित्य आकदमियाँ हिन्दी की पत्रिकाओं का प्रकाशन कर, हिन्दी केन्द्रित कार्यक्रमों का आयोजन कर प्रचार-प्रसार का कार्य कर रही हैं। ८ भारत में व्यक्ति-स्तर पर और संस्था-स्तर पर हिन्दी केन्द्रित अनेक पत्र-पत्रिकाओं, लघु पत्रिकाओं का प्रकाशन किया जा रहा है, जो हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण के साथ साहित्य-संस्कृति-कला के संरक्षण-संवर्धन की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। ९ महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में रोजगारोन्मुख पाठ्यक्रमों का हिन्दी से जोड कर संचालित किया जाना भी हिन्दी की आज की आवश्यकता की पूर्ति करता है। १० मनोरंजन जगत, वाणिज्य, पर्यटन, जनसंचार माध्यम, योग, विज्ञापन लेखन, अनुवाद, दुभाषिया, भाषा-प्रबन्धन, राजभाषा उद्योग, दृश्य-श्रव्य माध्यमों द्वारा हिन्दी शिक्षण, आदि क्षेत्रों में हिन्दी के माध्यम से रोजगार की संभावनाएँ बहुत बढ़ी हैं । हिन्दी भाषा या किसी भी भाषा के शिक्षण के लिए मूलभूत पाँच घटकों का होना आवश्यक है- १ शिक्षक २ शिक्षण की विषय-वस्तु ३ माध्यम ४ विषय-वस्तु को ग्रहण करने वाला प्रशिक्षु (छात्र) ५ प्रतिपुष्टि।

सभ्यता तथा विज्ञान के विकास के साथ - साथ रेखांकन, चित्र, चित्रलिपि, भाषा, मुद्रण, फोटोग्राफी, रेडियो, सिनेमा, दूरदर्शन, कम्प्यूटर, ग्राफिक्स आदि शिक्षण के माध्यमों में अधुनातन माध्यम - १ पाठ २ श्रव्य ३ दृश्य ४ श्रव्य-दृश्य ५ कम्प्यूटरित प्रस्तुति आदि भी प्रविष्ट हो गये हैं।

इसके अतिरिक्त हिन्दी शिक्षण - प्रशिक्षण में श्यामपट, माडल्स (ठोस प्रारूप) ओ। एच। पी।, एल। सी। डी। आदि का प्रयोग भी प्रभावशाली सिद्ध हो रहा है।

हमारा अनुभव परिवेश से जुड़ा होता है। भूगोल भी संस्कृति को रचता है। ऐसी स्थिति में भाषा केवल शब्दों को लेकर ही अपनी भाषिक बस्ती नहीं बसाती, वह अर्थ का पूरा संसार रचती है। यह शब्द - अर्थ का रथ अपने साथ हजारों वर्षों की परम्परा लेकर आता है। परम्परा को ठीक से जानने - समझने के लिए अपनी भाषा ही उपयुक्त और सक्षम हो सकती है। यह उपयुक्तता और सक्षमता भारत के सन्दर्भ में हिन्दी के पास है। हिन्दी भारत माता के माथे की बिन्दी है। भारत-भारती के कवि मैथिलीशरण गुप्त की पंक्तियों में हम कामना करते हैं-

मानस भवन में आर्यजन, जिसकी उतारें आरती ।
भगवान भारतवर्ष में, गूँजे हमारी भारती॥
(भगवान पूरे विश्व में, गूँजे हमारी भारती)

हिब्रू भाषा भाषी छात्रों को हिंदी पढ़ाने की समस्याएं और उनका समाधान

डॉ० गेनादी श्लोम्पेर

इज़्रायल एक छोटा देश है, जिसकी आबादी सिर्फ़ सतहत्तर लाख है। फिर भी हर साल भारत की यात्रा करनेवालों की संख्या 30-40 हज़ार तक पहुंचती है। अधिकतर यात्री उत्तर भारत में घूमने जाते हैं। लेकिन हिब्रू-हिंदी वार्तालाप की किताबें इतनी मात्रा में नहीं बिकती हैं जितनी कि बिकने की उम्मीद है। हर साल चार-पांच सौ किताबें बिक जाती हैं। हां, इसके कई कारण तो स्पष्ट ही हैं। आजकल किसी भी देश में यात्री अंग्रेज़ी का प्रयोग करके ही अपना काम कर लेते हैं। फिर कोई भी भाषा अपनाने के लिये काफ़ी परिश्रम और समय व्यतीत करना पड़ता है। और ही और, हिब्रू भाषा भाषियों के लिये हिंदी सरल नहीं लगती, और सरल है ही नहीं। इसके अनेक सबूत हिंदी के पाठों में मिले हैं।

हिंदी पढ़ाते समय जो समस्याएं सामने आती हैं, उनको दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। कुछ समस्याएं ऐसी हैं जो किसी भी विदेशी भाषा के अध्ययन-अध्यापन में पाई जाती हैं, यानी कि ये सब भाषाओं के लिये सामान्य हैं। तो कुछ विशेष भाषाओं से जुड़ी होती हैं।

सामान्य समस्याएं

मेरे विचार में सामान्य समस्याओं में सब से महत्त्वपूर्ण ये हैं - भाषा पढ़ने की प्रेरणा और लक्ष्य, बोलने के अभ्यास के लिये यह भाषा बोलनेवालों की उपस्थिति, पर्याप्त संख्या में पाठ्य पुस्तकों की उपलब्धि और भाषा पढ़ाने के माध्यमों (उपकरणों) का प्रयोग।

बहुत से इज़रायली लोग बड़ी इच्छा और रुचि के साथ हिंदी भाषा को स्वयं ही पढ़ते हैं। उन्हें हिंदी पढ़ने की प्रेरणा इस बात से मिलती है कि वे भारतीय संस्कृति से अभिरुचि रखते हैं और उनकी पढ़ाई का लक्ष्य प्रायः बोल-चाल की भाषा अपना कर आम लोगों से बात करना होता है। विश्वविद्यालय में हिंदी कोर्स का लक्ष्य अधिक गहराई से भाषा की जानकारी देना है। विद्यार्थी साहित्य और अख़बार पढ़ना, रेडियो और टी-वी प्रसारण समझना सीख लेते हैं। लेकिन दोनों ही स्थितियों में, चाहे कोई स्वयं पढ़ता हो या विश्वविद्यालय के कोर्स में, हिंदी भाषियों का अभाव महसूस होता है, जिन के साथ पाठों के बाद बात की जा सके। इस तरह भारत के बाहिर हिंदी सीखनेवालों को बात करने का पर्याप्त अभ्यास नहीं मिलता और उनकी जानकारी मुख्यतः निष्क्रिय है। वे लिखी या कही हुई बातें तो समझते हैं लेकिन बोलने में कठिनाई होती है।

विशेष समस्याएं

कोई भी भाषा सीखने की विशेष समस्याओं में लिपि, उच्चारण और व्याकरण मुख्य हैं।

क) - लिपि

इज़रायल में प्रचलित हिब्रू भाषा में शब्द दायें से बाएं लिखे जाते हैं, जैसे अरबी भाषा में। फिर भी हिब्रू भाषियों के लिये हिंदी की लिपि अपनाना कोई समस्या नहीं होता। एक ही महीने के अंदर लगभग सभी विद्यार्थियों को हिंदी अक्षरों का पूर्ण ज्ञान आ जाता है और वे स्वयं कोई भी शब्द लिख या पढ़ सकते हैं। उल्लेखनीय है कि मैंने विभिन्न देशों में तीन भाषाएं बोलनेवाले छात्रों को हिंदी सिखाई थी और कभी भी लिपि अपनाने में कोई कठिनाई नहीं हुई।

ख) – उच्चारण

कुछ विशेष ध्वनियों को छोड़कर हिंदी की अधिक्तर अल्पप्राण ध्वनियां हिब्रू की अल्पप्राण ध्वनियों से मेल खाती हैं। इस लिये छात्रों को ये ध्वनियां पकड़ने में अधिक समय नहीं लगता। हां, महाप्राण तो हिब्रू मे नहीं हैं, लेकिन उनको भी छात्र थोड़े अभ्यास के बाद ही सही रूप से उच्चारित करने लगते हैं।

ह्रस्व और दीर्घ स्वरों के उच्चारण में अंतर को समझा समझा कर थक जाता हूं। अगर शब्द में दो-तीन दीर्घ स्वर होते हैं, तो हिब्रूवाले छात्र एक पर बल देते हैं और शेष स्वर ह्रस्व बन जाते हैं, क्योंकि हिब्रू में बलाघात काफ़ी महत्त्वपूर्ण है। हिब्रू में केवल बलवान और बलहीन स्वरों का भेद होता है।

'रकार' को केवल वे विद्यार्थी ठीक से उच्चारित करते हैं, जिनके पूर्वज एशिया, अफ़्रीका या पूर्वी यूरप से इज़रायल में आये थे और अपनी मातृ भाषाओं की छाप अपने बच्चों की भाषा पर छोड़ी है। तो ये लोग 'रकार' को भारतियों की तरह उच्चारित करते हैं। लेकिन जिन लोगों की जड़ें पश्चिमी यूरप में हैं, या जिनके मां बाप इज़्रायल में पैदा हुए थे, उनका 'र' 'ग़' जैसा लगता है।

ध्वनियों में सब से कठिन हैं प्रत्यगवक्र व्यंजन जिनका हिब्रू में वुजूद नहीं है। ट, ठ, ड, ढ, ड़, ढ़, ण जैसे ध्वनियों को दो साल की पढ़ाई के बाद भी बस गिने चुने छात्र सही रूप से उच्चारित कर पाते हैं।

उच्चारण की समस्याएं छात्रों की व्यक्तिगत विशेषताओं से जुड़ी हुई होती हैं और पूरी तरह से अध्यापक के बस में नहीं हैं। लेकिन कुछ ऐसे प्रयत्न अवश्य किये जा सकते हैं जो उच्चारण को काफ़ी हद तक सुधार सकते हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं कि उच्चारण सुधारने के लिये यह ज़रूरी होता है कि छात्र विभिन्न हिंदी भाषियों के मुख से बातें सुनें, जिनके बात करने के ढंग और बात करने की गति भिन्न हों। लेकिन बात करने के तरीकों की नकल उतारने, उच्चारण पकड़ने में स्वतंत्र काम कहीं ज़्यादा कारगर साबित होता है। अपने अनुभव के आधार पर मैं इस परिणाम पर पहुंचा कि हिंदी गाने और हिंदी फिल्मों की डबिंग उच्चारण सुधारने में सब से प्रभावकारी हैं। इस के लिये बॉलिवूड हमें यह सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराता है। गाने और फ़िल्में अध्यापक के निरिक्षण में सीखे जाते हैं, जो उच्चारण के गलत या

सही होने का निर्णय ले सकता है। लेकिन दोनों अभ्यास स्वतंत्र काम को उत्तेजित कर देते हैं। छात्रों को गानों का हर पद या फ़िल्म का हर वाक्य बार बार दोहराना पड़ता है और उन्हें ख़ुद अपनी अदायगी का मूल्यांकन भी करना होता है।

ऐसा काम पढ़ाई के प्राथमिक चरणों में भी किया जा सकता है, जब छात्रों का शब्द भंडार और व्याकरण की जानकारी सीमित होती है। यह बात उल्लेखनीय है कि नकल करने के ये अभ्यास छात्रों को अनिवार्य काम के तौर पर नहीं, एक अतिरिक्त काम के रूप में पेश किये जाते हैं। इस तरह विद्यार्थी उन्हें मनोरंजन समझकर ही पूरा कर लेते हैं। यह काम उच्चारण सुधार के साथ-साथ छात्रों की शब्दावली बढ़ाने में सहायक होता है, जिसपर पाठ का समय नहीं जाता।

गाना तो कक्षा के सब छात्रों के लिये एक ही होता है, जब्कि फ़िल्मों की डबिंग में हर दृश्य में दो-चार छात्र भाग लेते हैं। इस लिये छात्रों के हर समूह को चार-पांच दृश्य बांटे जाते हैं। इस तरह वे न केवल अपना अपना भाग प्रस्तूत करते हैं, वरन अपने सहपाठियों के उच्चारण का मूल्यांकन भी करते हैं।

ग) - व्याकरण

व्याकरण की समस्याओं पर चर्चा करने से पहले मैं यह कहना चाहूंगा कि मुझे तीन देशों के छात्रों को हिंदी पढ़ाने का अवसर मिला था, जिन की मातृ भाषाएं अलग अलग थीं। अर्थात रूसी, उज़बेक और हिब्रू। प्रतिभाशाली छात्र तो हर देश में होते हैं। लेकिन जब साधारन लोगों की बात की जाए, तो हिंदी सीखने के मामले में हिब्रू भाषियों की तुलना में रूसी और उज़बेक छात्रों को काफ़ी सुविधाएं प्राप्त हैं। मेरा मतलब व्याकरण के अधिकतर नियमों और विशेषकर क्रिया-व्यवस्था में सामानता से है। यही नहीं, उज़बेक भाषा में शब्द-क्रम हिंदी से बहुत मिलता जुलता है। और हिंदी की तरह उज़बेक में फ़ारसी और अरबी के बहुत से शब्द प्रचलित हैं। जब्कि हिब्रू हर दृष्टि से हिंदी से भिन्न है। दूसरे शब्दों में किसी एक साधारण हिब्रू भाषी छात्र को साधारण रूसी और उज़बेक छात्र की अपेक्षा हिंदी अपनाने के लिये कहीं ज़्यादा परिश्रम करना पड़ता है।

हिब्रू सामी (Semitic) भाषा है। इसका ढांचा हिंदी से बिल्कुल अलग है। इस लिये व्याकरण की जिन समस्याओं से छात्र आम तौर से परेशान होते हैं, उनमें वाक्य रचना प्रथम है। हिब्रू में वाक्य का ढांचा इस तरह है - कर्ता, क्रिया, कर्म, जबकि हिंदी में – कर्ता, कर्म, क्रिया। इसलिये हिब्रू भाषियों को तीन-चार शब्द से ज़्यादा लंबे वाक्य बनाने के लिये काफ़ी लंबे अरसे से भांति भांति के अनेक अभ्यास करने पड़ते हैं। बहुत से विद्यार्थी दो साल के कोर्स के बाद भी बहुशब्द या संयुक्त वाक्य बनाने में काफ़ी गलतियां करते हैं।

उज़बेक भाषी छात्रों की एक और सुविधा है। हिंदी की तरह उज़बेक भाषा में कारक चिह्न और परसर्ग संज्ञा के बाद आते हैं, जब्कि हिब्रू में संज्ञा के पहले। कारक चिह्न 'का' विशेष तौर पर बहुत से हिब्रू भाषी छात्रों के लिये एक बड़ी बाधा प्रमाणित हुआ है।

हिब्रू में हर काल के लिये क्रिया का एक ही रूप होता है जो पुरुष और वचन में रूपांतरित होता है। जबकि हिंदी में वर्तमान काल और अतीत काल में बहुत सारे रूप पाये जाते हैं। जैसे

मैंने पढ़ा
मैंने पढ़ा है
मैंने पढ़ा था
मैं पढ़ता था
मैं पढ़ रहा था

इन सब के लिये हिब्रू में क्रिया का एक ही रूप है - קראתי (कराती)। किसी विशेष काल में हिंदी की क्रिया का अर्थ और भेद समझाने के लिये हिब्रू में क्रिया-विशेषन लगाये जाते हैं। फिर हिंदी में संदिग्धार्थ और संभावनार्थ (जो इच्छाबोधक क्रियारूप भी है) महत्त्वपूर्ण हैं, जबकि हिब्रू में ये सब अनुपस्थित हैं।

हिंदी व्याकरण में एक और बात है जो इज़रायली छात्रों के लिये (और सभी विदेशी छात्रों के लिये) एक विशेष परेशानी का कारण सिद्ध हुई है। और वह है संयुक्त क्रियाएं। जैसे

मैंने दे दिया
मैंने दे रखा
मैंने दे डाला
मैं दे बैठा   आदि

एक तरफ़ तो वे व्याकरण से संबंधित हैं और दूसरी तरफ़ शब्द रचना से। ऐसे क्रियारूप हिब्रू और दूसरी बहुत सी भाषाओं में उपलब्ध नहीं हैं। संयुक्त क्रियाओं पर पश्चिमी देशों के विद्वानों ने बड़ी संख्या में शोध कार्य किया है, मगर भारतीय विद्वानों ने इन पर काफ़ी ध्यान नहीं दिया। मेरे विचार में बहुत ज़रूरी है कि भारत के भाषाविज्ञ इस विषय पर एक अच्छी पुस्तक लिखें ताकि विदेशी छात्रों को हिंदी की पढ़ाई में सहायता मिले।

अक्सर हिंदी का व्याकरण समझाने के लिये मैं अंग्रेज़ी भाषा का हवाला करता हूं। क्योंकि अंग्रेज़ी और हिंदी के व्याकरण में कुछ ऐसे तथ्य हैं जो या तो एक जैसे हैं, या मेल खाते हैं। चूंकि सब विद्यार्थी अछी तरह अंग्रेज़ी जानते हैं, यह भाषा हिंदी के पाठों में मेरे बहुत काम आती है। लेकिन अंग्रेज़ी हिंदी की बहन तो है, मगर जुड़वीं बहन नहीं है। इस लिये हिंदी की विशेषताएं समझाने के लिये मुझे दूसरे उपाय खोजने पड़ते हैं।

इस सिलसिले में मेरा निजी अनुभव कहता है कि भाषा की पढ़ाई में अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिये पाठ भावनात्मक विधि पर आधारित होने चाहिये। भाषा जो भी हो, छात्र अंग्रेज़ी, रूसी, हिब्रू या उज़बेक क्यों न बोलते हों – सिद्धांत एक ही होना चाहिये। इस के अंतर्गत भाषा के अध्यापक को अवचेत के स्तर पर छात्रों की भावनाएं प्रभावित करनी चाहिये। प्रौद्योगिकरण के विकास ने भाषा के अध्यापकों के हाथों ऐसे यंत्र और साधन थमा दिये हैं, जिनका वे थोड़े ही साल पहले सपना तक नहीं देखते थे। कम्प्यूटर, इंटरनेट, यूट्यूब ने विदेशी भाषाएं सीखने की पहुंच को, इसके लक्ष्य को बदल दिया है। इन सब से विदेशी भाषाएं सीखने की प्रेरणा बहुत बढ़ जाती है। और किसी कुशल अध्यापक के हाथों में ये सब साधन और ज़्यादा कारगर बन सकते हैं।

पिछली सदी के छठे दशक में बलगारिया के मनोविज्ञानी गेओर्गी लोज़ानोव ने विदेशी भाषाएं सीखने की एक अत्यंत फलदायक पद्धति – suggestopedic पद्धति प्रस्तूत की थी, जिस में अभिनय को बड़ा महत्त्व दिया गया। इस पद्धति का वयस्कों के समूहों में सफल प्रयोग किया गया।

जिस तेल अवीव विश्वविद्यालय में मैं हिंदी पढ़ाता हूं, उसमें प्रोफ़ेसर लोज़ानोव की पद्धति को पूरी तरह से क्रियांवित कर पाना बहुत मुश्किल है। घंटों का अभार, हर समूह में छात्रों की बड़ी संख्या (20 – 25 तक छात्र)। फिर यह भी ध्यान में रखना पड़ता है कि हिंदी मुख्य विषय नहीं है, बल्कि दस-बारह विषयों में से एक है, जिसको कुछ छात्र विवश होकर ही चुनते हैं। लेकिन प्रोफ़ेसर लोज़ानोव की पद्धति के कुछ अंश पाठ्यक्रम में ज़रूर सम्मिलित किये जा सकते हैं, और सम्मिलित किये जाने चाहिये।

उदाहरण के लिये पढ़ाई के प्रारंभिक चरणों में किसी भी विषय पर बात-चीत तैयार की जा सकती है (जैसा कि वार्तालाप की किताबों में होता है)। जैसे – बाज़ार में, दुकान में, रेस्टोरेंट में, होटल में, सड़क पर, डॉक्टर के पास, मंदिर में आदि। इस तरह एक छोटी सी एकांकि बन जाती है, जिसका अभिनय करते समय छात्र एक साधारण से टेक्स्ट को अपने भावनाओं से रंगा देते हैं। यही कारण होगा कि ऐसे वार्तालापों का अभिनय किसी शुष्क टेक्स्ट बार बार पढ़वाने और अनुवाद कराने से अधिक फलदायक होते हैं। मुझे हिंदी और हिब्रू के व्याकरणों में अंतर, उदाहरण के लिये शब्द-क्रम या संयुक्त क्रियाओं का उपयोग समझाने में काफ़ी समय लगता है, जब्कि किसी एकांकी का मंचन करते समय ये सब नीयम ज़्यादा जल्दी छात्रों की समझ में आते हैं।

हमारे विश्वविद्यालय में हर साल दस जनवरी को अंतर्राष्ट्रीय हिंदी दिवस मनाया जाता है। उस दिन हिंदी के छात्र हिंदी में रंगारंग तमाशा प्रस्तूत करते हैं, जिसमें गाने, कविताएं, नाटक आदि शामिल होते हैं। इसके बाद एक-दो महीने से नाटकों की चर्चा रहती है। नाटकों से छात्र इतना प्रभावित होते हैं कि उनके पूरे के पूरे वाक्य याद करके पाठों में उनका उल्लेख करते हैं और विभिन्न मौकों पर उनका सही हवाला देते हैं।

छात्रों ने स्वयं नये नये नाटक सीखने की बिंती की। अब वे नियमित रूप से नये नये एकांकी सीखते हैं और उनका मंचन करते हैं। कभी-कभी फ़िल्मों के रूप में यूट्यूब में लगा देते हैं। इस प्रकार हिंदी पढ़ने में छात्रों की रुचि और प्रेरणा बढ़ गयी है, जिसके कारण पढ़ाई की प्रभावता में भी वृद्धि हुई। जिन एकांकियों का वे मंचन कर चुके हैं उनमें

कनाद ऋषि भटनागर का एकांकी 'जुलूस'
रूपनारायण शर्मा का एकांकी 'किराए का मकान'
गिरिराज शरण अगरवाल के कई व्यंग्य एकांकी
प्रेमचांद के उपन्यास 'रंगभूमी' का एक गद्यांश
पंचतंत्र की कई कहानियों पर आधारित कुछ एकांकी

छात्रों को प्रेरित करने के लिये मैंने तीसरे साल का हिंदी कोर्स पूरी तरह से दूरदर्शन के समाचारों पर आधारित किया। लेकिन पढ़ाई के प्रारंभिक चरणों में समाचारों का प्रयोग नहीं किया जा सकता। इन चरणों में एकांकी ही सब से उचित सामग्री प्रदान करते हैं। समस्या बस इस बात की है कि उपयुक्त

एकांकी ढूढ़ पाना सरल नहीं है। ज़रूरी यह है कि वाक्य छोटे और स्पष्ट हों, कि उनकी शब्दावली छात्रों की जानकारी के स्तर से मेल खाएं, कि एकांकी रोचक और मनोरंजक हों। ऐसा होता है कि या तो मुझे खुद एकांकी लिखना पड़ता है या उपलब्ध रचनाओं का अनुकुलन करना। कभी-कभी एकांकी की कहानी में बदलाव करना पड़ता है। लेकिन किसी की साहित्यिक रचना में बदलाव लाना इसी रचना को नये सिरे से लिखने के समान होता है।

कितना अच्छा होगा यदि केंद्रीय हिंदी संस्थान या अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय जैसे अनुसंधान केंद्र पेशेवर लेखकों के सहयोग से ऐसे एकांकी संग्रहों की लड़ी तैयार करें जो पढ़ाई के विभिन्न चरणों में प्रयुक्त हों और जो प्रचलित पाठ्य-पुस्तकों को अधिक प्रभावी बना दें।

दूसरी भाषा के रूप में हिंदी

चित्रा कुमार एवं ऐश्वर्ज कुमार,

सन 2007 में पहली बार कैम्ब्रिज असेसमेंट, जो कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का अंग है, उसने द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी की परीक्षा आरंभ की। कैम्ब्रिज असेसमेंट दुनिया भर के 126 देशों में करीब 500,000 विषयों पर परीक्षाएं लेने वाली संस्था बन चुकी है। इसके अंतर्गत लगभग 2000 से भी ज़्यादा स्कूल शामिल हो चुके हैं। इसकी मान्यता ब्रिटेन समेत विश्व भर में स्थापित हो चुकी है। अब यू.के. ही में करीब 300 ऐसे स्कूल हैं जहां पर कैम्ब्रिज आई.जी.सी.एस.ई परीक्षाएं करवा रहा है।

द्वित्तीय भाषा के रूप में हिंदी की परीक्षा पर विचार विमर्श 2005 में आरंभ हुआ और वर्ष 2005 में परीक्षा का पहला नमूना तैयार किया गया। हालांकि परीक्षा का नमूना बनाने से पहले कुछेक स्कूलों की ओर से हिंदी के एक ऐसे प्रश्न पत्र की मांग उठाई गई जिसके माध्यम से बोलचाल और प्रतिदिन की हिंदी प्रयोग को उजागर किया जाए। इस मांग को ध्यान में रखकर ही कैम्ब्रिज परीक्षा द्वारा संचालित अंग्रेज़ी के प्रश्न पत्र की शैली को एक विकल्प के रूप में सुझाया गया था। लेकिन हिंदी के प्रश्न पत्र को तैयार करते हुए कई अभ्यासों को नए ढंग से पेश करने की कोशिश साकार हुई। इस परीक्षा का पहला प्रारूप कई स्कूलों में भेजा गया। आरंभिक प्रतिक्रिया भी उत्साहवर्धक साबित हुई। लिहाज़ा, इस परीक्षा के बारे में स्कूलों को अधिक जानकारी देने के लिए मुंबई में पहली कार्यशाला आयोजित की गई। इस कार्यशाला का संचालन डा. महेन्द्र वर्मा ने किया। कार्यशाला की सफलता का ही नतीजा था कि पश्चिम और उत्तर भारत के स्कूलों द्वारा इस परीक्षा को अपनाया गया। यहीं से दूसरी भाषा के रूप में हिंदी की पहली परीक्षा का 2007 में श्रीगणेश हुआ। लगभग 300 विद्यार्थियों ने इस परीक्षा में हिस्सा लिया।

पहले वर्ष में ही भारत के कई स्कूलों का ध्यान परीक्षा की तरफ आर्कषित हुआ। यह हिंदी भाषा और कैम्ब्रिज परीक्षा के मापदंड का ही असर मानना चाहिए जिसने जल्द ही न सिर्फ़ भारत में बल्कि ब्रिटेन समेत दुनिया के कई अन्य देशों में भी इस परीक्षा ने स्कूलों का ध्यान खींचा। इस अपार सफलता की बदौलत ही दूसरी भाषा के रूप में हिंदी पाठ्यक्रम की परीक्षा देने वालों की संख्या वर्ष 2007 में 300 विद्यार्थियों से बढ़कर वर्ष 2011 में 1500 तक जा पहुंची है। महज़ 5 वर्षों में विद्यार्थियों की संख्या में आई अभूतपूर्व वृद्धि स्पष्ट संकेत करती है कि यह विस्तार भविष्य में भी जारी रहेगा। अतः विद्यार्थियों की संख्या में आई अभूतपूर्व बढ़ोतरी के यह रूझान भविष्य में हिंदी के रचनात्मक पाठ्यक्रम निर्माण की प्रक्रिया को समझाने में अहम साबित हो सकते हैं। इस पेपर के माध्यम से हिंदी भाषा और भविष्य में दूसरी और तीसरी भाषा के रूप में पाठ्यक्रम पर चर्चा को आगे बढ़ाने का प्रयास है।

हिंदी के पाठ्यक्रम को दूसरी भाषा के रूप में वर्ष 2005 में तैयार करने का विचार महज़ संयोग नहीं था, बल्कि यह बदलते भारत और दुनिया भर में भारतीयों के सामने अपने बच्चों को हिंदी भाषा से जोड़ने की भावना का परिचायक बना और बन रहा है। अभिभावकों की अपने बच्चों के प्रति चिंता का ही एहसास था कि जब इस परीक्षा का प्रारूप स्कूलों तक पहुंचा तो हाथों हाथ इस पाठ्यक्रम को

अपनाया गया। विज्ञान, अंकगणित, अंग्रेज़ी भाषा का ज्ञान अपने सपनों को सच करने के लिए अनिवार्य था तो अपनी भाषा को किसी रूप में पढ़ने पढ़ाने की इच्छा भी जीवित थी। यह इस इच्छा का ही नतीजा था कि हिंदी भाषा की इस परीक्षा को 5 वर्षों के अल्पकाल में ही बड़ा समर्थन प्राप्त हुआ। इस बहस को एक सार्थक दिशा देने के लिए मैंने पेपर दो हिस्सों में बांटा है। पहला हिस्सा पाठ्यक्रम और उसके प्रमुख बिंदुओं पर केन्द्रित है। दूसरा हिस्सा पाठ्यक्रम में शामिल पढ़ने, लिखने और सुनने के अभ्यासों के माध्यम से हिंदी भाषा की सामग्री और भाषा स्तर पर विश्लेषण की कोशिश है।

सर्वप्रथम, कैम्ब्रिज पाठ्यक्रम के माध्यम से लिखने और पढ़ने की परीक्षा जिसे परीक्षा 1 भी कहा जाता है, प्रमुख है। पढ़ने लिखने की यह परीक्षा 67 प्रतिशत अंश पर आधारित होती है। यह परीक्षा दो हिस्सों में विभाजित होती है जिसे खंड 1 और खंड 2 कहते हैं। पहले खंड में चार अभ्यास दिए जाते हैं। पहले अभ्यास में एक गद्यांश पढ़ने के बाद दिए गए 6 प्रश्नों के उत्तर लिखने पड़ते हैं। यह अभ्यास विद्यार्थी के पढ़ने और दी गई जानकारी को प्रश्न के अनुसार सही उत्तर खोजने की कुशलता पर आधारित होता है। अभ्यास 2 में आवेदन पत्र भरने के लिए विज्ञापन में से सही जानकारी ढूढ़ना शामिल होता है। अभ्यास 3 में भी गंद्याश के प्रश्नों के अनुसार जानकारी एकत्र करके दिए गए प्रश्नों के उत्तर देना प्रमुख होता है। दूसरे शब्दों में पहले तीनों ही अभ्यास सही और उचित जवाब जो गद्यांश या फिर विज्ञापन के रूप में पेश किए जाते हैं, उनको ढूढ़ना ही विद्यार्थी के पढ़ने की क्षमता का परिचायक बनता है। यह सभी गद्यांश या विज्ञापन समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं से या जगत जाल से लिए जाते हैं। शायद सामग्री के स्तर पर किसी निश्चित निर्धारित पाठ्य पुस्तक का न होना भी इसकी एक उपलाब्धि माना जा सकता है।

पढ़ने लिखने के खंड 2 में पहला अभ्यास गद्यांश पर आधारित होता है। जबकि दूसरा अभ्यास निबंध लेखन होता है। निबंध लेखन किसी एक विषय पर केन्द्रित होता है। पिछले 5 वर्षों के विषय पर ध्यान डालें तो स्पष्ट होता है कि विषय आज के विद्यार्थियों के लिए बेहद प्रासांगिक सुनाई पड़ते हैं। उदाहरण के लिए क्या स्कूल में मोबाइल फोन पर प्रतिबंध लगाना चाहिए या नहीं। इसप्रकार, सभी 6 अभ्यास पढ़ने और लिखने की योग्यता का आकलन करने में प्रमुख अभ्यास माने जा सकते हैं। इन अभ्यासों के माध्यम से पढ़ने लिखने का आधार वह गद्यांश तो बनते ही हैं लेकिन प्रश्नों को भी पूछते समय विद्यार्थी की भाषाई सूझबूझ के स्तर को परखा जाता है। इसके लिए गद्यांश में दी गई जानकारी के तथ्यों, दृष्टिकोण और विचार के बीच के स्पष्ट अंतर को प्रश्नों के द्वारा उठाया जाता है। विद्यार्थी के जवाब इन आपसी अंतरों को दर्शा पाएं इसका विशेष ध्यान रखा जाता है। लिहाज़ा, यह प्रश्न पत्र हिंदी भाषा के सरोकारों को दिलचस्प सामग्री के द्वारा पेश ही नहीं करता बल्कि शब्दावली प्रयोग और वैचारिक विमर्श के अहम पक्षों से भी जोड़ने का प्रयास करता है। इन दोनों ही खंडों में प्रयोग की गई हिंदी भाषा विद्यार्थियों को साहित्यिक ज्ञान न देकर दिन प्रतिदिन के प्रयोग की हिंदी से जोड़ती है।

सुनने के प्रश्न पत्र में इन्हीं पक्षों को कई दिलचस्प वार्तालाप और जानकारी संबंधी सूचनाओं के नाट्य रूपातंरण द्वारा पूरी सामग्री को तैयार किया जाता है। इस सामग्री को विद्यार्थी सुनते हैं और फिर प्रश्न पत्र पर अपने जवाब लिखते हैं। यह प्रश्न पत्र अंकों की दृष्टि से शेष 33 प्रतिशत पर केन्द्रित

होता है। इस परीक्षा में कुल 4 अभ्यास शामिल होते हैं। पहले दो अभ्यास तथ्यों और जानकारी को सुनने पर केन्द्रित होते हैं और बाकी दो अभ्यास विद्यार्थियों को तथ्य, दृष्टिकोण और विचार के आपसी अंतर को समझने की क्षमता का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसप्रकार दोनों ही प्रश्न पत्र हिंदी भाषा के विद्यार्थियों में तथ्य, दृष्टिकोण और विचार के आपसी अंतर को विकसित करने की क्षमता पर बल देते हैं।

दूसरी भाषा के रूप में हिंदी की परीक्षा को सफल बनाने में कैम्ब्रिज असेसमेंट की भूमिका अहम रही है। यह पाठ्यक्रम दुनिया भर में अधिक से अधिक स्कूल अपनाएं। इसके लिए अब तक 4 कार्यशालाएं आयोजित की जा चुकी हैं। मुंबई के अलावा यह कार्यशाला अहमदाबाद, बेंगलुरू और लंदन में भी आयोजित की जा चुकी है। इस कार्यशाला में अब तक पाठ्यक्रम संबंधी जानकारी को विस्तार से समझाने का प्रयास किया गया है। इस पाठ्यक्रम की सफलता को देखते हुए कैम्ब्रिज परीक्षा चाहती है कि दुनिया भर के स्कूल इस पाठ्यक्रम के बारे में जानें। भविष्य में इस पाठ्यक्रम के लिए नए अभ्यास बनाने की योजना भी शामिल है। स्कूलों में अध्यापकों से लगातार संपर्क बना रहे, इसके लिए भी कैम्ब्रिज परीक्षा इंटरनेट पर एक अध्यापक चर्चा का मंच बना रही है।

साथ ही परीक्षा की कापियां जांचने के कार्य को अधिक नियोजित और परीक्षा को सुगठित करने के लिए इस वर्ष से ऑनलाइन जांच की प्रक्रिया का शुभारंभ हो रहा है। इस प्रक्रिया में शामिल परीक्षक मानते हैं कि यह प्रक्रिया भविष्य में परीक्षा परिणाम निकालने की प्रक्रिया ही में नहीं बल्कि हिंदुस्तान से भी परीक्षकों को जोड़ने में अहम भूमिका निभाएगी। यदि ऐसा होता है तो न सिर्फ़ यह परीक्षा भारत में नए परीक्षकों को इस पाठ्यक्रम से जोड़ेगी बल्कि दुनिया भर से हिंदी परीक्षकों की भूमिका अहम बनेगी। इससे भाषा संबंधी कई वैचारिक पक्षों पर भी चर्चा का अवसर पैदा होगा। हिंदी भाषा का दूसरी भाषा के रूप में पढ़ना या फिर तीसरी भाषा के रूप में पढ़ना विमर्श का एक प्रश्न बन चुका है। इस पाठ्यक्रम और परीक्षा की सफलता भविष्य में इससे जुड़े कई अन्य प्रश्नों पर भी बहस को आगे बढ़ाएगी।

पिछले 5 वर्षों के अनुभव ने हमें हिंदी भाषा संबंधी कई प्रश्नों से अवगत करवाया है। इसी का नतीजा है कि कठिन और आसान हिंदी क्या है इस बहस को हम एक परिप्रेक्ष्य में देखने की कोशिश कर रहे हैं। भारत में इस पाठ्यक्रम का स्वागत करने वालों में उन स्कूलों की संख्या अधिक है जिन्हें हम भारत में पब्लिक स्कूल और यहां पर प्राइवेट स्कूल कहते हैं। भारत में इन स्कूलों में हिंदी भाषा पढ़ने पढ़ाने का चलन नहीं था, लेकिन दूसरी भाषा के रूप में हिंदी के पाठ्यक्रम ने ऐसे स्कूलों में अपनी जगह बनाई है। इसके माध्यम से ही यह अहम तथ्य भी ध्यान देने लायक है कई सौ अध्यापकों को इन धनी स्कूलों में नौकरी मिल पाई है। लिहाज़ा, यह दो अर्थों में एक बड़ी विजय है कि हम हिंदी भाषा को इन स्कूलों के भीतर पहुंचा पाए हैं तो दूसरी ओर इस परीक्षा के द्वारा रोज़गार के अवसर भी हिंदी भाषियों के लिए बढ़ें हैं।

प्रश्न पत्र की सामग्री, भारतीय स्कूलों के लिए संतुलित नज़र आती है, लेकिन वही सामग्री कुछ स्कूलों के लिए जिनमें अधिकांश स्कूल विदेशी हैं, मानते हैं कि यह सामग्री कठिन है। हालांकि इन 5 वर्षों में इस सामग्री को बेहद संतुलित करने का भगीरथ प्रयास भी जारी है। इससे यह अंदाज़ा लगाना

भारी भूल माना जाएगा, यदि आप सोचते हैं, कि भारतीय स्कूलों में विद्यार्थी ज़्यादा हिंदी पढ़ते हैं। वास्तविकता इससे अलग है। क्योंकि यह विद्यार्थी भारत में रहते हैं और उन्हें हिंदी सुनने और बोलने के पर्याप्त अवसर मिलते हैं इसलिए ये विद्यार्थी विदेशी विद्यार्थियों की अपेक्षा ज़्यादा बेहतर प्रदर्शन करते हैं। यहां पर यह जोड़ना भी ज़रूरी है कि विदेशों में रहने वाले सभी विद्यार्थियों के लिए परीक्षा कठिन नहीं होती। अरब देशों में रहने वाले विद्यार्थियों का प्रदर्शन भी श्रेष्ठ रहा है।

इसी वर्ष 2011, मार्च में बेंगलुरू में कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला का उद्देश्य सदैव की तरह दक्षिण भारतीय स्कूलों के अध्यापकों को पाठ्यक्रम के बारे में जानकारी देना था। कार्यशाला संचालक ऐश्वर्ज कुमार ने बताया कि कार्यशाला में 30 अध्यापकों ने भाग लिया। उन्होंने बताया कि कैसे दक्षिण भारत के स्कूलों में बड़ा परिवर्तन आया है कि अब हिंदी भाषा के प्रति पहले जैसा विरोध नहीं है। अधिकांश अभिभावक चाहते हैं कि उनके बच्चे हिंदी भाषा सीखें। यही नहीं बल्कि हिंदी सिखाने वाले अध्यापकों की मांग भी बढ़ रही है। हिंदी भाषा और हिंदी के पाठ्यक्रम के लिए यह शुभ समाचार है।

द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी की परीक्षाएं विश्व के अनेकानेक देशों में हो रही है। इसका सारा प्रबंधन कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के एक अंग द्वारा होता है। प्रश्नपत्रों के अभिकल्पन से लेकर परिणामों की घोषणा आदि इसी एक अंग का काम है। इस अंग में कुल मिला कर दो सारे समय और १५ परीक्षक परीक्षा के बाद काम करते हैं। इस विषय को इकाई के प्रबंधक द्वारा नियोजित किया जाता है। प्रश्नपत्रों की तैयारी तथा तकनीकी पक्षों का ध्यान रखने के लिए २ मुख्य परीक्षक हैं। इनके अतिरिक्त लगभग १४ परीक्षक हैं जिनका काम होता है कापियों को जांच कर प्राप्त अंकों को केंद्र तक सही समय पर भेजना। सारा क्रम बड़ा ही जटिल है किन्तु अब तक कोई समस्या नहीं आई है। इस कार्य को और अधिक सुगढ़ बनाने के लिए, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, इस वर्ष से 'आन लाइन मार्किंग' का प्रयोग किया जा रहा है। इसकी सफलता से इस इकाई को और अधिक व्यापक बनाया जा सकेगा।

हिन्दी भारत की भाषा एवं भारतीय संस्कृति का प्राण है। देश को चाहिए कि इसको कोनेकोने- में पहुंचाने का प्रयास करे ताकि बच्चे इससे जुड़ कर भाषा का ज्ञान ले सकें। भारत आर्थिक दृष्टि से मज़बूत हो रहा है और विश्व की निगाहें इस पर लगी हैं व्यापार की दृष्टि से। इस कारण अधिक से अधिक लोग हिन्दी सीखना चाहेंगे और सीख भी रहे हैं, इस दृष्टि से भी इस इकाई को बढ़ावा मिलना चाहिए। इकाई के प्रचारप्रसार में- भारतीय दूतावासों की भूमिका अहम हो सकती है।

उच्च हिंदी शिक्षण में वेब प्रयोग

(सोआस)

मैं सोआस में हिंदी साहित्य और भारत के सांस्कृतिक और साहित्यिक इतिहास के साथ साथ उच्च स्तर की हिंदी की कक्षा भी पढ़ाती हूँ, ऐश्वर्ज कुमार जी के साथ. इस प्रस्तुति में साहित्य शिक्षण को किनारा करके मैं अपने भाषा शिक्षण के अनुभवों और शिक्षा पद्धति पर बात करना चाहती हूँ. यह लगातार बदलती हुई प्रक्रिया है, जिसमें हम नए नए प्रयोग और विद्यार्थियों की बदलती रुचियों को शामिल करने की कोशिश करते रहते हैं. उच्च स्तर पर हिंदी पढ़ाते हुए संतोष तो बहुत मिलता है, और उसकी संभावनाएं भी असीम हैं, मगर इसमें कई कठिनाइयाँ और समस्याएँ भी पेश आती हैं.

प्राथमिक स्तर पर हिंदी पढ़ाने का कार्यक्रम काफी हद तक निर्धारित होता है आप चाहें जो भी तरीका अपनाएं, बुनियादी व्याकरण, रोज़मर्रा की बोली और मुहावरे, आम जीवन की शब्दावली उसमें सब शामिल होंगे. विद्यार्थी को frustration तो हो सकता है कि वह कितना कम बोल पा रहा है, फिर भी ध्यान दिलाये जाने पर वह आसानी से यह महसूस करेगा कि वह कितना सिख रहा है. यानि progression, प्रगति को देखना और दिखाना आसान रहता है.

फिर प्राथमिक हिंदी शिक्षण के लिए सामग्री पर्याप्त मात्रा पर मिल जाती है: व्याकरण की कई किताबें हैं, drills भी ज्यादा पुराने नहीं पड़ जाते और हर शिक्षक और शिक्षण केंद्र के पास वे इकट्ठे होते जाते हैं. कई विश्वविद्यालयों ने हिंदी के लिए web सामग्री भी बनाई है:

http://www.avashy.com/hindiscripttutor.htm
•A door into Hindi (Afroz Taj, North Carolina Center for South Asia Studies):
http://taj.chass.ncsu.edu/
•Hindi-Urdu Flagship (R. Snell, U of Texas, Austin, formerly SOAS):
http://hindiurduflagship.org/resources/learning-teaching/hindi-learning-materials/

वे भी आम तौर पर प्राथमिक स्तर की हिंदी शिक्षा के लिए बनाई गई हैं. University of Pennsylvania का *नई दिशाएँ, नए लोग* का पाठ्यक्रम अब वेब पर भी उपलब्ध है, और वह माध्यम स्तर के शिक्षण के लिए बहुत ही उपयोगी है. यह सामग्री 1988 में

तैयार की गयी थी, तो पोषक, भाव, वगैरह सब उस समय के हैं. जो दुसरे कारणों से भी उपयुक्त हो सकते हैं मसलन १४विन कक्षा की एक सीन में *हम लोग* के कार्यक्रम का एक दृश्य मिलता है, जो मैं शुरुआती TV सोप ओपेरा के नमूने के तौर पर दिखाती हूँ. देखें:

•http://www.southasia.upenn.edu/hindi/Volume 2/index.html

उच्च स्तर के शिक्षण को लेकर मैं मुख्य रूप से तीन ही बातें सामने रखना चाहती हूँ:

१) प्रगति का साफ़ रास्ता न दिखने की वजह से शिक्षक को पाठ्यक्रम को दिशा और विद्यार्थी को आत्म विश्वास प्रदान करने के लिए दूसरी तरह की स्त्रतेग्य को अपनाने की ज़रूरत पड़ती है. मेरी नज़र में उच्च स्तर के शिक्षण के मूलतत्त्व ये हैं: **भाषा शैलियों की विविधता, अलग अलग विषयओं पर विशिष्ट शब्दावली, और हर तरह की सामग्री को समझने में दक्षता.** हमारे सोआस की कक्षा में हम आखिरी साल में इन विषयों और भाषा शैलियों को शामिल करते हैं:

१. औपचारिक/अनौपचारिक शैली (पत्र व्यवहार)
२. अंग्रेजी / हिंदी वाक्य संरचना में फर्क
३. भाषा वैज्ञानिक भाषा शैली: "अव्यक्त कथन", और उसका ठोस उदाहरण देने के लिए कृष्णा सोबती के उपन्यास *दिलो दानिश* का एक प्रसंग
४. मनोविज्ञान की शब्दावली: दो पत्रिकाओं की चिट्ठियाँ तथा *लगे रहो मुन्नाबाई* में मुन्ना भाई की मनोचिकित्सक से मुलाक़ात
५. हिन्दू धर्म और मिडिया: बाबा रामदेव का एक वीडियो, वेब पर कोई व्रत कथा, औरदो फ़िल्में: *जय संतोषी माता* तथा *अमर अकबर अन्थोनी* में चमत्कार का सीन
६. उर्दू की शैली और तकल्लुफ और तहज़ीब की शब्दावली (*शतरंज के खिलाड़ी* के सन्दर्भ में)
७. हिंदी/अंग्रेज़ी अख़बारों में खबरों में फर्क और हिंदी अख़बारों की रिपोर्टिंग की भाषा शैली
८. गालियाँ (*प्रयोग और प्रयोग* पुसतक से)
९. दलितों और मिडिया: बसपा कअ विडिओ और शब्दावली, *अमर चित्र कथा* की आंबेडकर जीवनी, *लगान* का दृश्य
१०. राजनीती की भाषा: नुक्कड़ नाटक (*हत्यारे, हल्ला बोल* का दृश्य), हिंदी फिल्मों के गाने (*दुनिया में आये हैं, नन्हे मुन्हे बच्चे, ये महलों... की दुनिया)* और संवाद (*कुली*

में अमितabh बच्चन का भाषण)   ------------------------

इन विषयों का अपना कोई तय क्रम हो, ऐसा नहीं है. तो विद्यार्थियों को हर बार समझाना पड़ता है कि इस विषय और इस सामग्री के पीछे कौन सा मकसद है. और फिर कक्षा के अंत में भी उनको याद दिलाना पड़ता है कि उन्होंने इस कक्षा में क्या क्या सीखा है.

२) दूसरी बात है हर विषय के लिए **तरह तरह की सामग्री** को पेश करने की ज़रूरत है. पुराने ढंग के "रीडरों" में सिर्फ़ लिखित पाठ शामिल होते थे. मगर आजकल हम मानते हैं कि विद्यार्थी को कक्षा में शामिल करने के लिए, उसका ध्यान जगाये रखने के लिए और उसकी बोलने और समझने की क्षमता बढ़ाने के लिए उसके सामने ज़्यादा से ज़्यादा जीवन्त, "चलती फिरती" सामग्री को पेश करने की ज़रूरत है. साथ ही, हर कक्षा में विविधता की सख्त ज़रूरत होती है ताकी उनका ध्यान न भटके, तो हम आजकल छोटे छोटे लिखित पाठों के साथ साथ फिल्मों, टीवी कार्यक्रमों और यू ट्यूब के विडियो का ज्यादा इस्तेमाल करते हैं. हर सामग्री के साथ कोई न कोई अभ्यास या क्रिया जुड़ी रहती है:

यहाँ मैं दो ही नमूने पेश करूँगी :

पहला नमूना है **दलित और मिडिया का.** इस विषय की कक्षा में तीन तरह की सामग्री विद्यार्थियों के सामने रखती हूँ:
क) कुमारी मायावती की जीवनी, बसपा के वीडियो के आधार पर:

1.http://www.youtube.com/watch?v=-IzpWzepMLo

इस में विद्यार्थियों का पहला काम समझने का है (filling the blanks + सवालों का जवाब). दूसरा कम है (worksheet) role-play, जिसके मार्फ़त विद्यार्थियों को इस शब्दावली और इस दृष्टिकोण और भाषा "चरित्र" का अभ्यास करना पड़ता है: उनसे कहा जाता है कि वे कल्पना करें कि वे सचमुच मायावती, ता पत्रकार, या बसपा का कार्यकर्ता हों और **उसी शैली में** बात करें. उनको इसमें काफी मज़ा भी आता है (होम्वोर्क भी इस तरह का है)!

विद्यार्थियों से सवाल:

•

अनुसूचित जाति और दलित में क्या फर्क है?
•कुमारी मायावती किस पृष्ठभूमि से आई है? क्या वह साधारण या असाधारण पृष्ठभूमि से है?
•

मायावती का चिन्तन
मुख्य मुख्य बिन्दुओं को गिन लीजिए:
-
-
-
-

Role-plays:

१. कुमारी मायावती से बातचीत

Work in pairs: one of you be Mayavati, the other a journalist interviewing her who asks:
•Can you tell me something about your background?
•How did you decide to enter politics?
•Why have you decided never to marry?
•Despite reservation (आरक्षण) do you think that Dalits are still facing discrimination (भेदभाव)?
•Have things changed now that there is a Dalit party (BSP)? What difference has it made?
•In the past you have made a government in U.P. with the BJP: aren't they manuvadi?
•They say that you are using your power to take enormous bribes and you have accumulated lots of diamonds: does this not damage the image of Dalits?

२. दलित कार्यकर्ता से बातचीत

Work in pairs: one of you be a Dalit activist, the other a journalist interviewing him/her who asks:
•How long have you been an activist?
•Why did you become one?
•When did you first hear about Ambedkar?
•What do you think of Mayavati?
•In the past Mayavati has allied herself with the BJP, which is considered a party of savarnas: wasn't it a betrayal?
•What difference do you think Mayavati has made to Dalit women?
•They say she is immensely rich, loves diamonds:: does this not damage the image of Dalits?

भाषा का अभ्यास करने के साथ साथ विद्यार्थी आजकल की भारतीय राजनीति से भी परिचित हो जाते हैं, हिंदी के ज़रिये. यह मेरी शिक्षण पद्धति का मूल सिद्धांत है. विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों के लिए, मेरा मन्ना है, यह बेहद ज़रूरी है कि वे भाषा-शिक्षण और विषय की पढ़ाई को अलग अलग न मानें. अक्सर कहा जाता है कि भाषा किसी समाज और संस्कृति को समझने के लिए ज़रूरी होती है, फिर भी आजकल विश्वविद्यालयों में भारत के समाज और संस्कृति की पढ़ाई पूरी तरह अंग्रेज़ी

के माध्यम से हो रही है. तो विद्यार्थी के मन में, किसी न किसी तरीके से, यह विचार ज़रूर पैदा होता होगा कि भाषा पर इतनी मेहनत करने की भला क्या ज़रूरत थी? या भाषा सीखना सिर्फ़ लोगों से बातचीत करने के लिए होता है. तो मेरा मानना है कि भाषा और सामाजिक/सांस्कृतिक विषयों को साथ साथ पढ़ाना चाहिए.

इस कक्षा की दूसरी सामग्री है *लगान* का दृश्य:

http://www.youtube.com/watch?v=Jshswo0d82Y&feature=fvwrel
कुमारी मायावती तो बसपा का वीडियो है. मगर मुख्य धरा की मिडिया में दलितों को किस ढंग से दिखाया गया है? (कक्षा में विद्यार्थियों को *सुजाता* का कोई गाना या दृश्य भी दिखाती हूँ) *लगान* का दृश्य इस विषय पर बहस करने का अच्छा बहाना पेश करता है. विद्यार्थियों से कचरा के नाम, उसके लूला होने, उसके व्यवहार को लेकर बातचीत होती है. साथ ही गाँव की बोली उनके लिए मुश्किल पड़ती है तो उसकी भी थोड़ी चर्चा होती है.

इस कक्षा में तीसरी सामग्री है ***अमर चित्र कथा*** की डॉ आंबेडकर की जीवनी. इसमें दो तरह के काम शामिल हैं. एक तो विद्यार्थियों को हरेक प्रसंग को **संक्षेप में** बताना पड़ता है. फिर उनसे पूछा जाता है कि कॉमिक में बबसेह्ब आंबेडकर की कैसी छवि उभर आती है? वर्ण संघर्ष को किस रूप में पेश किया गया है? गाँधीजी से मतभेद को किस ढंग से दिखाया गया है ? (पूना पेक्ट का प्रसंग उन्होंने शायद इतिहास की कक्षा में पढ़ा होगा) संविधान में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका का कोई ज़िक्र इसमें क्यों नहीं मिलता? यानि, कॉमिक की गुप्त प्रकट विचारधारा को लेकर सवाल.

३) तीसरी बात जिसपर मैं जोर डालना चाहती हूँ यह है कि उच्च स्तर के हिंदी विद्यार्थियों को हर विषय, हर परिस्थिति, हर तरह के पाठ से निपटना चाहिए. हम मानते हैं कि वे गलतियाँ तो करेंगे ही, गलत लिंग का प्रयोग करेंगे या बीच बीच में अंग्रेज़ी शब्दों को डालेंगे यह तो सभी लोग करते हैं. मगर हम विद्यार्थियों के साथ इस पर बहुत जोर देते हैं कि जो पाठ या विषय हम उनसे सामने रखते हैं, वे सब असली हैं, आजकल के समाज और संस्कृति से जुड़े होते हैं. और वे इस मुकाम पर पहुंचे हैं कि उनको किसी भी विषय पर अपनी राय देने की स्थिति में होना चाहिए, और हिंदी में भी उनको सोचना चाहिए! और हिंदी में भी लोग सोचते हैं. हिंदी में सोचने के अपने तौर तरीके, अपने मुहावरे भी होते हैं.
राजनीति इस बात का अच्छा नमूना होती है. एक तरफ हम उनको राजनीतिक शब्दावली सिखाते हैं (*कुमारी मायावती* में जिसका काफी प्रयोग हो चूका है). मगर जो

ज़्यादा दिलचस्प काम है वह है हिंदी में राजनीति पर टिपण्णी करने के कौन से तरीके और माध्यम हैं? कौन से मुहावरे कामगर होते हैं?
तो "राजनीति" वाले विषय में हम नुक्कड़ नाटक पढ़ते भी हैं (सफ़दर हाशमी का *हत्यारे),* और उसको पढ़ने के पहले *हल्ला बोल* ~~का यह दृश्य~~ देखकर उसपर बातचीत करते हैं.

दूसरी कक्षा में मुख्य धारा की फिल्मों में राजनीति के चित्रण पर चर्चा करने के सिलसिले में कुछ गानों और फिर संवादों पर बात करने आते हैं. मनमोहन देसाई की फिल्म *कुली* में रैली का दृश्य इस सन्दर्भ बहुत ज़ोरदार है. पहले हम इस पर चर्चा हैं कि इस फिल्म में मज़दूर कि कैसी छवि पेश कि गई (मेहनती, ईमानदार, एक दूसरे का सुख दुःख बाँटनेवाले, होश्यार, खुदा/भगवन पर ईमान रखनेवाले आदि: गाना "*सारी दुनिया का बोझ हम उठाते हैं* . देखें:
http://www.youtube.com/watch?v=8zsh0dXUyQc&feature=रेलातेद २:३१

दुर्भाग्य से आजकल यू ट्यूब पर से पूरी फिल्म हटाई गयी है (सिर्फ़ गाने उपलब्ध हैं), मगर दृश्य से ज़्यादातर हिंदी भाषा भाषी परिचित ही होंगे. इसमें भी हम दो तरह के काम करवाते हैं: पहला काम है comprehension (fill in the blanks). दूसरा कम है भाषा शैली, मुहावरों और rhetoric पर ध्यान और बातचीत: हम विद्यार्थियों से पूछते हैं कि यह भाषा इतनी प्रभावशाली क्यों है?

Fill in the blanks:

इकबाल भाई जिंदाबाद!

जिंदाबाद तो है आप लोग, जिन्होंने आज मुझे इन अमीरों के ....
एक रेलवे प्लेटफॉर्म से उठाकर इलेक्शन प्लेटफॉर्म पर खड़ा कर दिया.
हाँ, पूछिए, क्या सवाल पूछना चाहते हैं आप?

तुम, एक गरीब, गंवार, अनपढ़,.......................... पूरी कर सकते हो? इनकी समस्याएँ ....? इनको ....,........ दिला सकते हो?

कोई माई का लाल किसी को दो वक़्त की रोटी नहीं दिला सकता है क्योंकि................ .... दिए हैं और कहा है कि चीर दे ज़मीन और सीधा निकाल अपने हिस्से की रोटी. मगर आप? आप लोग हम गरीबों का सीना

चीर कर हमारी भी हिस्से कीभी रोटी निकाल लेते हैं. हमारा खून निकाल लेते हैं. और...................... तो हमारी आत्मा भी निकालकर बेच देंगे. [तालियाँ]

- तुम समझते हो यह सारी दुनिया तुम्हारी कन्धों की.................... पर चलती है? एक करोर ग़रीबों का पेट .... इसीलिए मान लो. दुनिया का कोई भी काम..................................

कैसे नहीं हो सकता? कभी किसी अमीर को सड़क पर गोली खाकर मरते हुए सुना है? है वो ग़रीब ही होता है जो अपने सिने में गोली खाकर................................. बढ़ाता है. यह दुनिया अमीरों से नहीं, हम जैसे लोगों से चलती है. क्योंकि ताज महल से लेकर एक छोटा घर भी मेरे जैसे एक ग़रीब भाई ने अपने कन्धों पर पत्थर ढोकर बनाया है, किसी अमीर ने नहीं. अमीरों ने तो जो कुछ भी बनाया है, वह रिश्वत या रिश्वत के बलबूते पर बनाया है. कोई दस रूपये में वोट खरीद लेता है. सौ रूपये में कोई अपनी अर्ज़ी पास करवा देता है. हज़ार रूपये में कोई इम्तहान पास करवा देता है. लाखों रूपये देकर ये अपना टेंडर पास करवा देते हैं. और मैं कहता हूँ कि सबसे पहले इन रिश्वतखोरों को फ़ेल करो, तब जाकर कोई ग़रीब पास होगा.
... क्या इसका जवाब मुझे भी देना होगा?

तो इस प्रस्तुति में मेरे कहने का तात्पर्य यह रहा है कि उच्च स्तर के हिंदी शिक्षण में शिक्षक के पास आज़ादी तो बहुत है, मगर शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए प्रगति, माध्यम की विविधता और हर पाठ, हर सामग्री के साथ कोई न कोई अभ्यास जोड़ना ज़रूरी होता है. वेब पर सामग्री तो बहुत मिलती है, मगर उसको एक ढांचे में रखना, उसका सशक्त प्रयोग करना शिक्षक पर निर्भर होता है.

फ्रंचेस्का ओर्सिनी

SOAS

वेब पर उपलब्ध हिंदी पढ़ाने की सामग्री:

•Australian National University Hindi Language Studies
–Introductory Hindi Course Materials. (Barz, Richard K et al.)

•Michigan State University SALRC: Hindi-Urdu Blended Teaching Resources (hindiurdu.net)
•North Carolina State University: A Door into Hindi (Afroz Taj)
•Syracuse University's Hindi/Urdu Conversation Lessons (Tej Bhatia, Jishnu Shankar)
•The UCLA Language Materails Project's Hindi Teaching Resources: Language Profile, links, citations
•University of Chicago's South Asia Language Resource Center
–Linguistic Survey of India's Hindi samples (DSAL)
•University of Pennsylvania's Web-based Hindi Materials
–*nai diśāẽ nae log* web-based Hindi tutorials
•Lesson containing *sāre jahān se acchā*
•UT Austin Hindi-Urdu Flagship
–Supplementary Hindi Learning Materials by Rupert Snell to his Teach Yourself Hindi books
–Foreign Language Teaching Methods
•Wesleyan University: A Virtual Village (Arampur, Bihar) by Peter Gottschalk and Matthew Schmalz
•

अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण की आवश्यकताएं

डॉ. कृष्ण कुमार

वैश्वीकरण-भूम्ण्डलीकरण के इस दौर में विश्व सिमट रहा है । व्यापार की सीमाएं बढ़ रही हैं और विचार-विनिमय के धरातल बदल रहे हैं । इन सबके बीच समन्वय-एकता की संवाहिका भाषा का भी विकास हो रहा है । भाषा के साथ जुड़ी संस्कृति भी स्थानान्तरित हो कर विश्वसमाज को और अधिक सशक्त बना रही है । यद्यपि आकड़ों के अनुसार विश्व में 196 स्वतंत्र राष्ट्र हैं किंतु राजनीति के कारण अमेरिका केवल 195 को ही मानता है । उसकी सूची में ताईवान सम्मिलित नहीं है । इनमें से 192 संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य हैं । डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल (1) के आकड़ों के अनुसार 63 राष्ट्रों में हिंदी बोली-समझी जाती है जो अपने आप में एक महत्वपूर्ण तथ्य है । जहॉं एक ओर भारत के लिए यह गर्व एवं आत्मसम्मान की बात है वहीं यह निहित परिवर्तनशीलता के कारण हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के मानकीकरण के लिए बड़ी समस्या भी बन जाता है । इस अन्तरराष्ट्रीय आयाम के कारण हिंदी को अनेकानेक चुनौतियों का सामना करना है ।

भाषा और संस्कृति का आपस में आत्मा-शरीर, जल-सरिता का सम्बंध होता है । दोनों अविभाज्य इकाई हैं । हिंदी अब स्वतंत्र हो विश्व के भाषायी आकाश में फैल रही है । इस कारण इसके स्थायित्व को सुरक्षित रखने के लिए अनेकानेक आवश्यकताओं की पूर्ति अनिवार्य हो जाती है । उपभोक्ताओं के बिखराव के कारण हिंदी को सर्वग्राह्य बनाने के लिए यह आवश्यक है कि हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण को स्थानीय संस्कृति से जोड़ कर उपयुक्त पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाय । संस्कृति से कटा हुआ कोई भी पाठ्यक्रम भाषा के साथ न्याय नहीं कर सकता है । भूमण्डलीकरण के दौर में विश्व के अनेकानेक लोग हिंदी सीखना चाहते हैं और यह केवल इसलिए नहीं कि ऐसा करने से उन्हें कोई आर्थिक लाभ होगा वरन् इसलिए कि वे भारत की सांस्कृतिक-पारम्परिक सम्पदा को सही तौर पर जानना-समझना चाहते हैं । वे भारत से प्यार करते हैं ।

बहुराष्ट्रीय विविधताओं के कारण कोई एक पाठ्यक्रम सभी देशों के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता, क्योंकि:

1. स्थानीय भाषा भिन्नता के कारण
2. स्थानीय संस्कृति भिन्नता के कारण

अत: विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण के लिए एक बीज पाठ्यक्रम का निर्माण कर उसे विभिन्न देशों के लिए उपयुक्त बनाना होगा । अभी तक हिंदी का पठन-पाठन- शिक्षण निम्नरूप में होता रहा है:

1. प्रथम भाषा के रूप में
2. द्वितीय भाषा के रूप में

अभी तक विश्व के विभिन्न कोनों में हिंदी के शिक्षकों द्वारा स्वनिर्मित पाठ्यक्रमों का प्रयोग द्वितीय भाषा के रूप में होता रहा है । किंतु ऐसी स्थितियॉं, विशेष रूप से विदेशों में, उत्पन्न होती रही हैं जहॉं विद्यार्थियों को हिंदी सीखने में कठिनाइयॉं आती रही हैं । क्योंकि हिंदी उनकी द्वितीय भाषा न होकर तृतीय या चतुर्थ भाषा है । अत: अब यह नितांत आवश्यक हो गया है कि एक नए पाठ्यक्रम का निर्माण हो जिसमें इस पक्ष-सत्य का पूरा ध्यान रखा जाय । एक मानक बीज हिंदी पाठ्यक्रम बनना चाहिए ताकि सबके हिंदी का स्तर लगभग सामान्य हो । वैश्वीकरण के दौर में जब लोग आसानी से देशों की सीमाओं को पार करते हैं तब शिक्षार्थी भी ऐसा कर सकते हैं । अत: जैसा अब विश्वविद्यालयों में होने लगा है कि विद्यार्थी अपने कोर्स को स्थानान्तरित कर लेते हैं उसी प्रकार की सुविधा अब हिंदी के लिए भी उपलब्ध करानी होगी । इस प्रक्रिया को 'क्रेडित ट्रॉन्सफर' कहते हैं । यह हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के मानकीकरण से ही सम्भव हो सकता है । ऐसी परियोजना का विश्वहिंदी समाज स्वागत ही करेगा । आजकल विद्यार्थी हिंदी का प्राथमिक ज्ञान अपने-अपने देशों में लेकर भारत आते हैं हिंदी को परिमार्जित करने के लिए । ऐसा करने में उनको अपने ही देश में दो वर्षो तक पढ़ना पड़ता है । पाठ्यक्रमों का मानकीकरण न होने के कारण उनमें से कुछ को पुन: उसी सामग्री से गुजरना पड़ता है जिससे समय और धन का नुकसान होता है । विश्व में हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के मानकीकरण का दायित्व विदेश एवं ग्रह मंत्रालयों के साथ विश्व हिंदी सचिवालयए केन्द्रीय हिंदी संस्थानों और अन्तरराष्ट्रीय माहात्मा गांधी विश्वविद्याालयों जैसे संगठनों का हो जाता है । इस विषय पर काफी गम्भीरता से प्रोफेसर जगन्नाथन (2) ने एक प्रस्ताव रखा था । उन्होंने तो उच्च शिखा में मानकीकरण की आवश्यकता पर बल दिया था किंतु इस प्रक्रिया को प्रथमा, मध्यमा एवं उत्तमा स्तर के हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए भी करने पर ही अभीक्षित परिणाम मिलने की

संभावना बन सकती है । जगन्नाथन जी का कहना है कि-''उच्च शिक्षा के स्तर पर हिंदी के शिक्षण में मानकीकरण की सबसे बड़ी आवश्यकता विदेशी भाषा हिंदी के शिक्षण के क्षेत्र में है क्योंकि यहाँ 'मानक' के निर्माण और नियमन के लिए कोई अभिकरण नहीं है ।''

मशीनी उत्पाद की गुणवत्ता का सूचक इसकी एकरूपता और समानता होती है । और यह उत्पादन प्रक्रिया के मानकीकरण से ही सम्भव होता है । इससे विवाद घटता और व्यापार बढ़ता है । यही होगा अगर विश्व स्तर पर हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण का मानकीकरण हो जाता है । कार्य कठिन अवश्य है किंतु असम्भव नहीं । दीर्घकालिक सुपरिणाम प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि सामूहिक चेतना-विवेक को संग्रहीत कर इस कार्य में लगाया जाय । ऐसा होने से हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण का सही मूल्यांकन एवं भविष्य के लिए सम्यक् दिशा निर्देशन भी होगा ।

ऐसे मानकीकरण के लिए सुझाए गए संस्थानों के तत्वावधान में एक स्थायी समिति का निर्माण होना चाहिए । इस कार्य को गति प्रदान करने के लिए निम्न बिन्दुओं पर विचार किया जा सकता है:

1. विश्व के सभी राष्ट्रों में हिंदी में कार्यरत संस्थाओं एवं विद्यालयों से प्रतिनिधि चुने जाएं । इस कार्य को भारतीय दूतावास या कौंसुलावास के माध्यम से संयोजित करना चाहिए ।
2. केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा के निर्देशन पर प्रथम, द्वितीय और तृतीय भाषा के रूप में हिंदी पाठ्यक्रम का मानकीकरण करना चाहिए ।
3. पाठ्यक्रम में भारतीय-स्थानीय संस्कृति पर आधारित सामग्री होनी चाहिए ।
4. जहाँ तक सम्भव हो सके पाठ्यक्रमों का निर्माण स्थानीय हिंदी विद्वानों द्वारा ही होना चाहिए जिससे भाषा सम्बंधी तमाम समस्याओं का निवारण सरलता से हो सके ।
5. हिंदी अध्यापकों के प्रशिक्षण मानकीकरण के लिए दूतावासों में हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण अधिकारी की नियुक्ति होनी चाहिए जो इस कार्य को ठीक से नियोजित कर सके ।
6. परीक्षा प्रश्नपत्र एवं मूल्यांकन के लिए कैंब्रिज विश्वविद्यालय बोर्ड का अनुकरण किया जा सकता है ।
7. सभी परीक्षार्थियों को प्रथमा, मध्यमा या उत्तमा के प्रमाणपत्रों को केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा द्वारा दिया जाना चाहिए ।
8. समय-समय पर पूरी प्रक्रिया का निरीक्षण एवं पुनर्मूल्यांकन भी होना चाहिए ।
9. विदेशों में हिंदी शिक्षण से संलग्न अध्यापकों का सम्मान करते हुए विदेश मंत्रालय द्वारा कुछ मानदेय भी निर्धारित होना चाहिए ।
10. यथासम्भव प्रौद्योगिकी, वेब एवं मोबाइल फोन का प्रयोग कर युवापीढ़ी के लिए सारे कार्यक्रम को उपयोगी एवं आकर्षक बनाना चाहिए ।

अन्तरराष्ट्रीय हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के पाठ्यक्रमों में संस्कृति

अधिकतर हिंदी पाठ्यक्रमों में संस्कृति का अभाव रहता है जिसके कारण भाषा का प्रभाव भी अधूरा ही रह जाता है । यह बात और भी अधिक आवश्यक हो जाती है जब हम भारत से बाहर हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण की बात करते हैं । मेरे विचार से अंग्रेजी के प्रचार-प्रसार में यही गलती ब्रिटिश काउंसिल ने की । अंग्रेजी अपने दबाव के कारण निष्प्राण आगे बढ़ती गई । भारत को इससे बचना चाहिए और सायास प्रयास करना चाहिए हिंदी के पाठ्यक्रमों का निर्माण करते समय कि भाषा के साथ-साथ भारत-स्थानीय संस्कृति गुंफित रहे । ऐसा करने से हिंदी सजीव एवं अर्थप्रद रहेगी । टोक्यो विश्वविद्यालय, जापान, ने हिंदी पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय इस बात का पूरा ध्यान रखा । प्रोफेसर कृष्ण दत्त पालीवाल (3) जी बताते हैं कि किस प्रकार जापान में भारतीय संस्कृति के प्रतीकों का समावेश हिंदी शिक्षण में किया गया है । वह लिखते हैं-''जापान के अधिकांश विश्वविद्यालयों में हिंदी पाठ्यक्रमों के निर्धारण में प्रोफेसर दोई और प्रोफेसर तोशियो तनाका की भूमिका का विशेष महत्व रहा है । पाठ्यक्रम समिति के परामर्शदाता के रूप में इन विद्वानों ने यह मानकर पाठ्यक्रम-निर्धारण किया है कि भाषा का सम्बंध संस्कृति से बहुत गहरा है । संस्कृति, मिथक-दर्शन, साहित्य सभी को मिला कर ही पाठ्यक्रम का निर्माण होना चाहिए । इसी दृष्टिकोण को अपनाने के कारण जापान में स्नातक स्तर पर हिंदी पढ़ने वाला विद्यार्थी हिंदी भाषा के व्याकरण के साथ रामायण-महाभारत, पंचतंत्र और रामचरित मानस के बाद मोहन राकेश तक को पढ़ता है । भाारत के तीज-त्योहार, पर्व, ब्रत, तीर्थ, पूजा-उपासना के केन्द्र, नदियों, पर्वत, देवी-देवताओं शिव चरित सभी के विषयों में जानकारी पाता है ।'' कहना न होगा कि जापान में हिंदी शिक्षण का अर्थ है- भाषा के साथ भारतीय संस्कृति-परम्परा साहित्य का ज्ञान ।'' मेरे विचार से भारतीय संस्कृति के साथ स्थानीय संस्कृति का समावेश भी पाठ्यक्रम में होना चाहिए, विशेष रूप से बच्चों को पढ़ाने में ।

प्रौद्योगिकी के युग में हिंदी शिक्षण

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में निरंतर विस्फोट होता रहा है । नए-नए उपकरणों से जहाँ एक ओर सुविधाएं एवं सम्भावनाएं बढ़ी हैं वहीं इनसान आलसी होते हुए उन पर आश्रित होने लगा है । कुछ समय के लिए अगर बिजली चली जाती है या इंटरनेट की सुविधा नहीं मिलती है तो जीवन थम सा गया लगने लगता है । किंतु आज बच्चों और नवयुवकों को इनके माध्यम से बहुत कुछ पहुंचाया भी जा सकता है, यह सत्य सिद्ध हो चुका है । प्रौद्योगिकी का प्रयोग हमारे जन-जीवन में कितना समा चुका है इसको समझने के लिए अमेरिका के उस दृश्य को ध्यान में लाएं जब वहाँ के एक बड़े स्टोर में कुछ समय के लिए बिजली चली गई थी और सारे उपकरण विफल हो गए थे । स्टोर में हंगामा-लूट का वातावरण छा गया था । ध्यान देने की बात यह है कि इन उपकरणों के आने के पहले भी तो सारा काम होता ही था । अंतर केवल इतना आया कि अब मानसिक रूप से अंकगणित का प्रयोग भूल चुके हैं । ऐसे दृश्य आज के समय में सामान्य हो गए हैं जहाँ प्रौद्योगिकी पर ही सारा काम-काज आश्रित हो गया है ।

बदलते हुए समय में हमारी सोच तथा कार्यप्रणाली भी बदल रही है । अत: हमको हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में भी परिवर्तन लाना ही पड़ेगा । तख्ती और स्लेट या ब्लैकबोर्ड का समय समाप्त हो चुका है । मुझे याद है जब 1964-65 में जब मैं पढ़ा कर घर आता था तो सारे सर के बाल चाक की सफेदी से सफेद होते थे और घर पहुंचते ही नहाना पड़ता था । अब यह सारे काम प्रौद्योगिकी के माध्यम से होते हैं और पहले की अपेक्षा अधिक सुचारु रूप से होते हैं । राजेश के जैन (4) लिखते हैं कि-''परम आवश्यकता है कि हिंदी शिक्षण की आधुनिक प्रणाली में टेक्नोलॉजी का समुचित प्रवेश किया जाये । उनके बीच की परस्पर दूरी को कम किया जाए । मात्र टेक्नोलॉजी में हिंदी को न लाया जाये वरन् हिंदी में भी टेक्नोलॉजी को लाया जाये । और यह काम रचनात्मक साहित्य के माध्यम से हो सकता है ।'' कहने का अर्थ है कि प्रौद्योगिकी और सूचनातंत्र का अधिक से अधिक प्रयोग होना चाहिए ।

जहाँ एक ओर विश्व में पुस्तकों की बिक्री कम हुई है वहीं पुस्तकों का पठन बढ़ रहा है । अपनी पसन्दीदा पुस्तकों को लोग अब 'आई पैड' पर ई बुक के रूप में पढ़ने लगे हैं । यह उपकरण कुछ ही वर्षो पहले बाजार में आया था और अब साहित्य एवं ज्ञान के विस्तार में क्रांति ला रहा है । जो सुविधाएं पहले बड़े-बड़े संघटकों में भी नहीं होती थी वे अब लैपटॉप और चल फोन पर उपलब्ध होने लगी हैं ।

हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में इनका प्रयोग आरम्भ हो गया है जिसका अधिक से अधिक विस्तार होना चाहिए । चल टेलीफोन के माध्यम से से सारी सामग्री सुदूर गाँवों में भी भेजी जा रही है । इस कारण शहर और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच ज्ञान की दूरियाँ कम होंगी और विकास प्रगति से हो सकेगा । ये सुविधाएं पाठ्यक्रमों के मानकीकरण में भी सहायक सिद्ध होंगी ।

मल्टीमीडिया के माध्यम से बच्चों को बहुत कुछ, खेल-खेल में ही, सिखाया और पढ़ाया जा रहा है । गौरवशाली भारत (5) एक ऐसी ही सी.डी. है जिसमें मल्टीमीडिया का प्रयोग कर बड़े ही रोचक ढंग से भाषा-संस्कृति को प्रस्तुत किया गया है । यह अंग्रेजी-हिंदी में है और इसमें एक विषय से दूसरे में आसानी से विचरण किया जा सकता है । यहाँ तक कि इनका उपयोग विकलांगों के शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में भी होने लगा है जिससे एक नए संसार का ही विकास हो रहा है । अभी हाल में ही (18 से 20 नवम्बर 2011) विकीपीडिया द्वारा आयोजित एक सम्मेलन में भाग लेने का सुअवसर मुझे भी प्राप्त हुआ था । मुम्बई में आयोजित इस कार्यक्रम में कई नेत्रहीनों प्रतिभागियों ने भी भाग लिया था । इन सबने यह बताया कि किस प्रकार प्रौद्योगिकी का समुचित प्रयोग कर वे अपनी सीमित सीमाओं का विस्तार कर विश्व समाज तक अपने विचार पहुंचा रहे थे । इन तथाकथित अक्षम लोगों की प्रविष्टियाँ किसी भी मायने में सक्षम लोगों की प्रविष्टियों से गुणवत्ता और सारगर्भिता के मापदंडों पर कमतर नहीं थीं । ऐसे लोगों के लिए पुरानी शिक्षण प्रणालियों को बदलकर समसामयिक बनाना होगा । अत: हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में नए-नए प्रयोगों द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग कर हिंदी को विश्व भाषा के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है । किंतु सबसे पहले भारत में ही हिंदी की स्थिति को सुधरना होगा ।

मानकीकरण की दिशा में प्रथमा-मध्यमा के स्तर पर कोई नियोजित प्रयास नहीं हुआ है । मेरे विचार से यह अब समय की आवश्यकता हो गई है । अगर ऐसा नहीं किया गया तो उच्चस्तर की शिक्षा पर इसका असर पड़ेगा । यह बात सच है कि उत्तमा स्तर के पाठ्यक्रमों को मानक बनाने के प्रयास हो रहे हैं । किंतु विभिन्न प्रकार के वैविध्य के कारण यहाँ भी परेशानियाँ हैं । प्रशिक्षण की ओर अगर यथोचित ध्यान दिया जाय तो सुविधा हो सकती है ।

यह नितांत आवश्यक है कि प्रथमा एवं मध्यमा के स्तर पर हिंदी शिक्षण कार्यक्रमों को सुनियोजित किया जाय । इक्कीसवीं सदी में इनको देश-काल एवं परिवेश के अनुकूल बना कर स्थानीय भाषा के माध्यम से हिंदी पढ़ाने वालों को तैयार करते हुए, सही उच्चारण के लिए भाषायी प्रयोगशाला या वीडियो सी.डी. के साथ हिंदी भाषी शिक्षकों को भी साथ होना चाहिए । हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण को विश्वव्यापी बनाने के लिए और इसको अपने मंतव्य एवं गंतव्य तक पहुंचाने के लिए आवश्यक कुछ बिन्दुओं पर चर्चा इस आलेख में गई है । यह आशा की जाती है कि यह विश्व हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण को को और अधिक सुगढ बनाने में सहायक होगा ।

संदर्भ:

1. नौटियाल, जे.पी., 'भाषा शोध अध्ययन 2005 में हिंदी पहले स्थान पर', प्रवासी संसार, अंक 3, पृष्ठ 26-30, सितम्बर 2006 ।
2. जगन्नाथन, वी.आर., 'विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण:मानकीकरण का सवाल', गगनांचल, वर्ष 27६ अंक 4, अक्टूबर-दिसम्बर 2004, विदेशों में हिंदी उत्तरार्ध, पृष्ठ 24-37 ।
3. पालीवाल, कृष्ण दत्त, 'जापानी विश्वविद्यालय में हिंदी शिक्षण', सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन स्मारिका, भारतीय सांस्कृतिक सम्बंध परिषद, पृष्ठ 261-264, जून 2003, सूरिनाम ।
4. राजेश के. जैन, 'हिंदी और शिक्षा व्यवस्था', सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन स्मारिका, भारतीय सांस्कृतिक सम्बंध परिषद, पृष्ठ 157-159, जून 2003, सूरिनाम ।
5. गौरवशाली भारत, आर्यान ई-साफ्ट प्राइवेट लिमिटेड, एफ-8, शंकर मार्केट, कनाट प्लेस, नई दिल्ली-1, भारत ।

संक्षिप्त परिचय
डाॅ कृष्ण कुमार

जन्म: 14 फरवरी 1940, बहराइच, उत्तर प्रदेश ।

शिक्षा: बी़ टेक़ (आई.आई.टी. मद्रास, 1964), पी.एच.डी., (सरे विश्वविद्यालय यू.के., 1980) ।

साहित्यिक उपलब्धियाँ : 1995 म. "गीतांजलि बहुभाषीय साहित्यिक समुदाय" का गठन एवं संस्थापन (1995, बर्मिंघम् यू.के.)। अध्यक्ष कार्यकारिणी समिति (छठा विश्व हिन्दी सम्मेलन, 1999) । भारत एवं यू.के. के समाचार पत्रा. म. साक्षात्कार एवं भागीदारी ।भारत के दूरदर्शन एवं रेडियो में कई साक्षात्कार एवं भागीदारी ।2005 में अन्तर्राष्ट्रीय, बहुभाषीय संगोष्ठी, रामायण सम्मेलन, त्रिदिवसीय क्षेत्रीय हिंदी सम्मेलन का आयोजन (2005, 2006,2011) । रामायण ज्ञानकेन्द्र की स्थापना (अगस्त 2007) ।

प्रकाशन (हिंदी):

काव्य संग्रह –***"मैं अभी मरा नहीं"*** (1999), ***'चिंतन बना लेखनी मेरी'*** (2003), ***'लेकिन पहले इंसान बनो'*** (2005), ***''अक्षर-अक्षर गीत बने''*** ((२००८)) ***''एक त्रिवेणी ऐसी भी''*** ((२००९)), ***''नर्तन करते शब्द''*** ((२०१२))

कहानी संग्रह–''क्यों, क्यों और आखिर क्यों'', (२०१२)

निबंध संग्रह – ''भाषा साहित्य और राष्ट्रीयता'' ((२०११))

वैचारिक संकलन– ''आज का प्रसंग'' छोटे-छोटे उपाख्यानों का संग्रह ((२०१२))

Books in English-"The Theme For Today" (2012) **and "Poetry between Shores"** (A collection of poems in English, with publisher**)**

सम्पादन:

"धनक" – आठ भारतीय भाषाआ. का काव्य संकलन, अंग्रेजी अनुवाद के साथ(1999), **"Oasis Poems"** – An anthology of Multilingual Poetry with their translation in English (2003), **"Gitanjali Poems from East and West" –** 'ओएसिस पोएम्स की भांति अंग्रेजी अनुवाद के साथ भारतीय भाषाओं का संकलन (2003), **'काव्य सफ़र'** (कविता संग्रह, सात भारतीय भाषाआ. म. अंग्रेजी अनुवाद के साथ, 2006), ( ), ( ),**''अपनी उम्मीदों के साथ''** गीतांजलि समुदाय के 9 सदस्यों का कहानी संग्रह (2012) ।

सम्मान:

राष्ट्रीय एकता सम्मान (भोपाल, 2004), अक्षरम् हिन्दी सेवा सम्मान (दिल्ली, 2006), प्रवासी भारतीय हिंदी भूषण (यू.पी. हिंदी संस्थान लखनऊ, 2006), सम्मान (, 2008)।

सम्पर्क:

21 बिडफ़ॅर्ड ड्राइव, सेली ओक, बर्मिंघम, बी 29 6क्यू जी, यू. के.
दूरभाष : 00 44 121 472 5464, E-Mail : profdrkrishna@gmail.com